* टीकाकार के श्री गुरुदेव जी *

श्री श्री १०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी)

महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी

Scanned by CamScanner

श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट - बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

Scanned by CamScanner

विषय सूची

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृ-लोक का दर्शन । द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०१ ॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम । चतु-ष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम । पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह । षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४५२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६२ ॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत । अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४६६ ॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति । एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ४८२ ॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना । षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ४६१॥

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह । एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह । द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः ॥ पृष्ठ ५१६ ॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जो की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये । फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये ।

॥ इति शुभम् ॥

❋ श्री अमर रामायण ❋

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❋ बन्दना ❋

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❋:—

Scanned by CamScanner

* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

Scanned by CamScanner

रुक्मदण्ड करेधृत्वाभृत्यैः सम्वेष्टितानि च ॥
शक्तिकाग्राणि शोभन्ते ह्युपधान युतानिवै ॥६३॥

अगल बगल सेवक लोग स्वर्ण दण्ड लिये घेरे हैं, कोई शक्तियों को हाथों में लिये आगे पीछे शोभित हैं उन यानों में तकियादि सजे हुए हैं ॥६३॥

पश्यतान्तु जनानाम्वै मनो नेत्र हराणि च ॥
शतैकं संख्ययातानि वाहकैः शोभितान्यपि ॥६४॥

सैकड़ों की संख्या में सुन्दर भूषित वाहक लोग उन यानों को ढो रहे हैं इस प्रकार अति सुन्दर वे यान देखने वालों जनों के मन नेत्रों को हरण कर रहे हैं ॥६४॥

अग्रेतेषां हरिद्वर्ण समन्ताच्छोभितानिवै ॥
विचित्राशन युक्तानिमुक्ता जाल विलम्बितैः ॥६५॥

इस प्रकार इसके आगे हरित वरण के यान शोभित हैं जिनमें विचित्र आसन बिछे हैं, मुक्तावों की जालियां लटकी हैं चारों तरफ से अत्यन्त शोभायमान हैं ॥६५॥

वक्र मस्करयानानि मुक्ता गुम्फाश्चितानि च ॥
रुक्मार्क चन्द्र प्रतिमा शोभितानि सुप्रान्तके ॥६६॥

टेढ़े बांस लगे हैं, मुक्ताओं के झुमके लगे हैं स्वर्ण की सूर्य चन्द्रमाओं की प्रतिमायें बनी हुई हैं इस प्रकार सुन्दर किनारा वाले ये बहुत से यान ॥६६॥

दिव्यालंकार वस्त्रैश्चभूतितैस्तु जनैः शुभैः ॥
स्वर्णदण्ड करेधृत्वाभृत्यैः सम्वर्तितानि वै ॥६७॥

दिव्य अलंकारों से भूषित सुन्दर जनों द्वारा ढोये जाते हैं तथा इसी प्रकार स्वर्ण दण्ड हाथ में लिये हुये सेवक इनको चारों तरफ से घेरे हुए हैं ॥६७॥

एतेषामग्रतो देवि वेष्टितानि सुरस्मिभिः ॥
सोभन्ते रक्तवर्णानि सुखयानानि संघटैः ॥६८॥

हे पार्वती! इसके आगे सुन्दर प्रकाश से घिरे हुये लाल रङ्ग के सुखयानों का संघट शोभित है ॥६८॥

कुब्ज वन्शेन चित्रेण विचित्राणि लसत्त्विषा ॥
मुक्ताजाल कुम्भगुम्फैः-श्रेणिभिश्शोभितानि च ॥६९॥

जिन यानों में कूबड़े बांस चित्र विचित्र प्रकाश वाले लगे हैं, मुक्ताओं की जालियां लटकी हैं तथा ऊपर में मुक्ताओं का गुम्फित कलश प्रत्येक यानों में पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं ॥६९॥

एषाञ्चाप्यग्रगान्येत्र भृत्यैः सम्परितानिच ॥
सित वर्णानि शोभन्ते सुखयानानि पंक्तिभिः ॥७०॥

इनके भी सुन्दर सेवकों से पूर्ण सफेद वर्ण के सुखयानों की पंक्तियां शोभित हैं ॥७०॥

Scanned by CamScanner

प्रदीप्त पञ्च वर्णाना मेवं यनानि श्रेणिभिः ॥
विन्यासे प्रथमे चात्र शोभाधिक्य म्प्रवर्तितम् ॥७१॥

इन यानों के चारों तरफ पांच रङ्ग के दीपक पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं। इस प्रकार यह कई खण्ड वाले रङ्ग २ के यानों का प्रथम विन्यास शोभा में अत्यन्त चढ़ा बढ़ा है ॥७१॥

ततश्चाग्रे विराजन्ते रथा नीलाभ्रवर्णका ॥
नीलेन्द्रमणिभिश्चित्रैर्निर्मिताश्चक्रकाष्टकैः ॥७२॥

इस यान विन्यास [खण्ड] के आगे नील मेघ के समान बड़े २ रथ जिनमें आठ २ पहिये लगे हैं नीलमणि के बने शोभित हैं ॥७२॥

पताका कलशै दिव्यैः किंकिणी घण्टिका रणाः ॥
उपधानास्तरणैश्च शोभिता रस्मि विस्तृताः ॥७३॥

इन रथों में पताका-कलश दिव्यकिंकिणी घण्टिका शोभित हैं। रथों के भीतर गद्दियां मसलन्द बिछावन प्रकाश से विस्तृत शोभित हैं ॥७३॥

खचिद्रत्न रुक्म दण्ड धृतै र्दाशैश्च भूपितैः ॥
विचक्षणै रूपवद्भिः समन्तात्परिवारिताः ॥७४॥

इन रथों के खण्ड के चारों तरफ सुन्दर भूषित सेवक हाथों में स्वर्ण दण्ड लिए रत्न खचित दण्ड लिए चारों तरफ शोभित हैं। सबके सब बड़ी तीव्र बुद्धि वाले शोभित हैं ॥७४॥

एषामग्रे हरिद्रत्न निर्मितांशु चमत्कृताः ॥
पंक्तिभिश्चाति शोभन्ते किंकिणीनां सुझंकृतैः ॥७५॥

इन नील रथों के खण्ड के आगे हरित रत्नों से रचित वस्त्र वाले चमकीले प्रकाश वाले किंकिणियों की झनकार करते हुए पंक्ति के पंक्ति रथ शोभित हैं ॥७५॥

ततो ग्रगास्तु शोभन्ते स्यन्दना रक्त रत्नकैः ॥
निर्मिता विविधाकारैः कलशध्वज शोभनाः ॥७६॥

इसके आगे लालरङ्ग के रथ लाल रत्नों से निर्मित बिविध आकार प्रकार वाले कलश ध्वजाओं से शोभित हैं ॥७६॥

वसनै रथ वर्णैश्च तेषाञ्च पार्श्व वर्तिनः ॥
भूषिताः परिराजन्ते रुक्म दण्ड करान्तकाः ॥७७॥

इनके अगल बगल में चलने वाले सेवक भी लाल रङ्ग के ही वस्त्र भूषण धारण किये हुये रुक्म दण्ड हाथ में लिए हुए शोभित हैं ॥७७॥

तेषामग्रे विराजन्ते रथास्तु पीतरत्नकाः ॥
भूषिताश्च समायुक्ता रक्षकैश्च तथा विधैः ॥७८॥

इस लाल खण्ड के आगे पीत रत्नों से निर्मित पीत रथ सुन्दर भूषित घोड़ाओं से युक्त विविध प्रकार के भूषणों से भूषित सेवक रक्षा कर रहे हैं ॥७८॥

अंशुकैर्भूषितैः सर्वैश्चतुर्दिक्षु समावृताः ॥
चक्राष्टाश्वैर्विराजन्ते वेग वद्भिर्मनोहरैः ॥७६॥

इन रथों के भीतर पीत गद्दियां मसलन्द वितान परदे शोभित हैं। चारों तरफ से प्रकाशमान इन रथों में आठ चक्र हैं। बड़े बेग वाले आठ घोड़े प्रत्येक रथ में भूषित शोभित हैं ॥७६॥

रथाः केचि च्छित वर्णैः किंकिणी क्वाण शंकुलाः ॥
घण्टिकानां नाद युक्ताः महारस्मिभिरावृताः ॥८०॥

इसके आगे सफेद वर्ण के रथ किंकिणी और घण्टिकाओं के नाद से गूँजते हुए महान् प्रकाश मण्डल से घिरे हैं ॥८०॥

एवञ्च पञ्च वर्णानां स्यन्दनाना श्चसंततिः ॥
ततश्चाग्रे ह्युपयाना हयाः सस्वच्छुभालिभिः ॥८१॥

इस प्रकार पांच रङ्ग के पांच खण्ड रथों के हैं इनसे आगे सुन्दर सजे हुए घोड़ाओं की पंक्तियां हैं ॥८१॥

खचिभ्दूषाभिराजन्ते मुक्ता गुम्फ ललाटकाः ॥
मुक्तागुम्फित केशाश्च स्कन्ध देशोऽतिशोभनाः॥८२॥

जो रत्न खचित भूषणों से प्रकाशमान मस्तक में मुक्ताओं के गुम्फे लगे हुए तथा कन्धा पूछ में भी मुक्ता गुम्फित केश अति शोभित हो रहे हैं ॥८२॥

दोव्यदासन पीठाश्च पाद मञ्जीर कङ्कणाः ॥
चामरैः सेविताभृत्यैः सम्वीता बसनैरपि ॥८३॥

पृष्ठ [पीठ] पर प्रकाशमान जीन कसी हुई घोड़ों के पैरों में मंजीर युक्त कंकण लगे हुए दो दो नौकरों से चँवर द्वारा प्रत्येक घोड़ा सेवित हैं। पीठों में वस्त्र रत्न जड़े हैं ॥८३॥

ताण्डवेन क्रमत्पादास्ताल वन्धप्रमाणकैः ॥
विनीतानि र्गलास्ते स्वतः पंक्ति समाश्रिताः॥८४॥

इस प्रकार के घोड़े अपने पैरों से ताल बन्ध प्रमाणों करके ताण्डव नृत्य कर रहे हैं। आगे में कुछ झुके हुये सुन्दर नीति युक्त चाल से ठीक अपनी पंक्ति पर चलने वाले ॥८४॥

नीलाः पीताश्च हरिता रक्ताश्च शुक्ल वर्णकाः ॥
पीतस्कन्धा नीलकायाः पीतास्ते नील कन्धराः ॥८५॥

इस प्रकार के घोड़ों की कोई नील पंक्तियां इसी प्रकार पीत हरित लाल सफेद बरण की पंक्तियां और कोई पीले कन्धा वाले नील शरीर वाले कोई पीत शरीर वाले नील कन्धा वाले अलग ३ पंक्तियों से शोभित हैं ॥८५॥

स्वेतस्कन्धाः नीलकायाः नीलास्ते शितकन्धराः ॥
केचिद्रक्ताः हरित्कण्ठाः हरिता रक्त कन्धराः ॥८६॥

कोई सफेद कन्धा वाले नील शरीर के नील कन्धा वाले सफेद शरीर के कोई लाल शरीर के हरित कण्ठ हरित शरीर के लाल कन्धा वाले हैं ॥८६॥

Scanned by CamScanner

पीताः केचिन्नील कण्ठा नीलाश्चपीतकन्धराः ॥
कैचित्तु हरिता दिव्याः रक्तकन्धर शोभनाः ॥८७॥

कोई पीले शरीर नील कण्ठ के नील शरीर पीत कन्धा के कोई हरित शरीर लाल कन्धा के दिव्य शोभित हैं ॥८७॥

पोताङ्गा नील चित्राश्च नीलाङ्गा पीत चित्रकाः ॥
श्वेताः केचिन्नील चित्रा नीलास्ते श्वेतचित्रकाः॥८८॥

पीत अङ्ग वाले नील चित्र के नील शरीर वाले पीत चित्र के स्वेत शरीर वाले नील चित्र के नील शरीर वाले श्वेत चित्र के ॥८८॥

रक्ताः हया नीलचित्रा नीलास्तेरक्त चित्रकाः ।
पीता केचिद्धरि चित्राः हरिताः पीतचित्रकाः ॥८९॥

लाल शरीर वाले नील चित्र के नोल शरीर वाले लाल चित्र के पीत शरीर वाले हरित चित्र के हरिताङ्ग वाले पीत चित्र के घोड़े शोभित हैं ॥८९॥

ललाटे शित पुन्डाश्च केचितु नीलपुण्ड्काः ॥
हरित्पुड्रा विराजन्ते पीतपुण्ड्रास्तु केचन ॥९०॥

किसी के मस्तक में सफेद उर्ध्व पुण्ड् किसी का नील तिलक किसी का हरित किसी का पीत तिलक ॥९०॥

रक्तपुण्ड्रा हरिद्वर्णा हयाः केचित्समायुते ॥
केचिद्वज्राभदन्ताश्च विद्रुमाभाद्विजाः परे ॥९१॥

किसी का लाल तिलक हरे घोड़े इस प्रकार शरीर रङ्ग के अनुकूल अङ्गचित्र तथा कन्धे और मस्तक में उर्ध्व पुण्ड् तिलक से शोभित। कोई घोड़े हीरे सदृश दाँत वाले कोई मूंगा मणि के लाल दांत वाले ॥९१॥

नील रत्नाभदशनाः पीत रत्नाभ दन्तकाः ॥
हरिद्रत्नाभ दन्ताश्चपीताधरमनोहराः ॥९२॥

कोई नील रत्नों के दांत वाले कोई पीत रत्नों के दांत वाले कोई हरित रत्नों के सदृश दांत वाले घोड़े पीले अधर के मनोहर शोभित हैं ॥९२॥

काञ्चनाभखुराः केचि द्विद्रुमाभखुरा अपि ॥
नीलरत्नखुराः केचित्पीतरत्न लसत्खुराः ॥९३॥

किन्हीं घोड़ों के स्वर्ण खुर किन्हीं के विद्रुममणि सदृश प्रकाश वाले खुर किन्हीं के नील रत्नों के खुर किन्हीं के पीत रङ्ग के शोभित हैं ॥९३॥

वायु वेगा मनो वेगा स्तार्क्ष्यवेगाः सुपृष्टकाः ॥
सुलक्षणशतैर्युक्ता रणे नृत्य कराश्चते ॥९४॥

Scanned by CamScanner

कोई वायु के समान वेग वाले कोई मन के समाम वेग वाले कोई गरुड़ के समान वेग वाले सुन्दर लक्षण युक्त पीठ वाले रणभूमि में नृत्य करने वाले सैकड़ों लक्षण युक्त घोड़े पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं ।।६४।।

भद्र मन्द्रामन्द्रभद्राः कवराटा इति जातयः ।।
पारशीकाश्च वा वरटा वल्लिका सिन्धुजा अपि ।।६५।।

कोई भद्र मन्द्र जाति के कोई मन्द्र भद्र जाति के कोई कवराट जाति के कोई पारशिक जाति के कोई वरटा कोई बल्लिका कोई सिन्धुज कोई जाति २ के भी पंक्ति की पंक्ति घोड़े शोभित हैं ।।६५।।

सौरठाश्च पाणिपथाः काण्ढाल देशिकाः पराः ।।
शिङ्गलाश्चैव नान्देया उत्कलाश्च भुटंत काः ।।६६।।

सौरठ जाति के पाणिपथ तथा कण्ठाल और देशिक जाति के इसी प्रकार सिंगल व नान्देय तथा उत्कल, भुटन्तक जाति के घोड़े और ।।६६।।

वनायुजा बृण्ट्टकाश्च नैवटाः पाण्डुका अपि ।।
कश्मीर देश सम्भूता राट देश समुद्भवाः ।।६७।।

वनायुज तथा वृण्ट्टक जाति के एवं नैवट व पाण्डुक जाति के और काश्मीर देश के पैदा हुए इसी प्रकार राट देश के पैदा हुए ।।६७।।

ध्रुवटा भाल देशीया नारान्तक समुद्भवाः ।।
दामल्लका जटालाश्च मोटन्ता धोल देशकाः ।।६८।।

ध्रुवट और भाल देश के वं नरान्तक देश के पैदा हुए घोड़े हैं कोई दामल्लक देश के जटाल देश के मोटन्त व धोल देश के ।।६८।।

प्रवेकानां सन्धतिस्तु भूषितानां मनोहरा ।।
चामरैः सेवितानाञ्च नृत्येनपाद चारिणाम् ।।६९।।

एक २ जाति के घोड़ों की पंक्ति सुन्दर भूषणों से भूषित अङ्ग मनोहर शोभित हैं। प्रत्येक घोड़ा दोनों तरफ नौकरों से चवर द्वारा सेवित अपनी नृत्य कला से पैरों को चलाने वाले हैं ।।६९।।

परिवार्य्य शक्तिकैश्च प्रत्येकं शत शोभिनाम ।।
राजते वै हयानाञ्चपूर्वोक्तानांयथाक्रमम् ।।१००।।

शक्ति को हाथों में लिये हुए प्रत्येक खण्ड को सैकड़ों सेवक रक्षा करते हुए शोभित हैं। इस प्रकार घोड़ाओं के रङ्ग भेद जाति भेद चाल भेद देश भेद के क्रम से अलग २ पंक्तियां खण्ड २ करके शोभित हैं ।।१००।।

संघताः योगजानाञ्च भिन्नाभिन्नाः स्वजातिभिः ।।
द्विचक्र लक्षणाः केचि त्केचि त्त्रिचक्र लक्ष्मकाः।।१०१।।

एक २ जातिके अलग २ समूह अपनी योग्यता से मिले हुए हैं। कोई दो चक्रके लक्षण वाले कोई तीन चक्र के लक्षण वाले ।।१०१।।

चतुश्चक्र लक्षणाश्च पञ्च चक्राहि केपि च ॥
अपरेश्युः षट् चक्राश्च सप्त चक्रा स्तथा परे ॥१०२॥

कोई चार चक्र के लक्षण वाले कोई पांच चक्र के लक्षण वाले तथा इसी प्रकार कोई छः चक्र के लक्षण वाले कोई सात चक्र के लक्षण वाले ॥१०२॥

अष्ट चक्र लक्षणाः स्यु र्नव चक्रैस्समन्विता ।
एवं नाग लक्षणज्ञाः वदन्ति भिन्नभावतः ॥१०३॥

कोई आठ चक्र के कोई नौ चक्र के लक्षण वाले इस प्रकार हाथियोंके लक्षणों को जानने वाले भिन्न २ भाव पूर्वक हाथियों के लक्षणों को कहते हैं १०३॥

ललाटे यस्य चक्रैकं लक्षणं भव्यकंभवेत् ॥
सतु साक्षाद्गणाधीशो राज्ञां बिजय सिद्धिदः ॥१०४॥

जिसके ललाट में एक चक्र हो वह भव्यक (मांगलिक) लक्षण वाला होता है। वह हाथी राजाओं को विजय सिद्धि देने वाला हाथियों के गणों का साक्षात् अधोश होता है ॥१०४॥

अत्यन्त दुर्ल्लभो सौ स्याद्राज्ञा श्चासंख्यं सिद्धिदः ॥
लक्ष्मी गजो ह्यसौदेवि ह्येकदन्तो गुणायतः॥१०५॥

परन्तु वह अत्यन्त दुर्लभ है और राजाओं को असंख्य सिद्धि देने वाला है। हे पार्वती इसी को लक्ष्मी गज भी कहा जाता है। महान् गुणों से भरा यह हाथी एक ही दांत वाला होता है ॥१०५॥

चतुर्दन्तो भवेत्सोपि विष्णुगजः समाहितः ॥
द्वि चक्रोधर्म्म रूपश्च त्रिचक्रस्त्रयवर्गदः ॥१०६॥

यदि इस प्रकार का हाथी चार दांत वाला हो जाय तो विष्णुगज उसको कहा जाता है। यदि वह हाथी दो चक्र का हो तो वह धर्म रूप तथा तीन चक्र मस्तक वाला हो तो अर्थ, धर्म, काम त्रैवर्ग को देने वाला समझा जाता है ॥१०६॥

एवम्भूतोत्तमा नागा मातङ्गाश्च मदोद्गताः ॥
स्वर्ण सूत्राञ्चितास्तीर्णा रत्न काञ्चनभूषणाः ॥१०७॥

इस प्रकार के उत्तम हाथी मतवाले मस्तकों से मद चुवाते हुए स्वर्ण सूत्रों से रचित वस्त्र पीठ में बिछे रत्न खचित स्वर्ण के भूषण सजे ॥१०७॥

धृतपृष्ट विमानाश्च मञ्चपृष्टाञ्च केचन ॥
पंक्तिभिः परिशोभन्ते घण्टानाद दिगुच्छिताः॥१०८

इस प्रकार विमान पीठों में रक्खे हुये हैं। किसी हाथी के पीठ पर मंच रक्खे हुए घन्टाओं के नाद को करते भूषणों के लच्छे हिलाते पंक्ति के पंक्ति शोभित हैं ॥१०८॥

सुखयानादयो न्यासाः सर्वे वादित्र संयुताः ॥
पादातिभिःपरिवृताः मनो नेत्रापकर्षकाः ॥१०९॥

इस प्रकार इन हाथियों के खण्ड के मन और नेत्रों को आकर्षित करने वाले सब प्रकार के बाजाओं के संयुक्त पैदल सेना से घिरे हुए सुखयानों का खण्ड (न्यास) है ॥१०६॥

तेषामग्रे पृथक्त्वेन पञ्चवर्णांशुकाञ्चिताः ॥
पादातीनांसंघतयो राजन्ते खड्गहस्तकाः ॥११०॥

इस खण्ड के आगे पांच रङ्गके वस्त्रों को पहिने हुए एक २ रङ्गके वस्त्र वाले अलग२ करके पैदल सेना का समूह है जो हाथों में तलवार लिए हुए हैं ॥११०॥

सम्पाद्य मन्त्रिणा चैवं सुमन्तेन महात्मना ॥
आहूयसैन्यकानन्ताः प्रेरिताः सज्जना विधौ ॥१११॥

इस प्रकार महात्मा सुमन्त्र मन्त्री जी ने अनन्त सेनापतियों को बुला करके बरात के साथ सज कर चलने की प्रेरणा किया ॥१११॥

तेपिसर्वे च वाहिन्यो ज्वलदस्त्र विभूषणैः ॥
सज्जीकृताः सुमन्तस्य नियोगाच्छीघ्रमागताः ॥११२॥

वे सब सेनापति भी प्रकाश ज्योति से जगमगाते वस्त्रों को पहने हुये इसी प्रकार शस्त्रोंको धारण किये हुए अपनी २ सेना से संयुक्त सुसज्जित होकर के सुमन्त्र जी के नियोग से शीघ्र आकर तैयार होगये ॥११२॥

एवं सम्पाद्य सज्जानं रामारोहण हेतवे ॥
नाम्ना रिपुञ्जयो नागः महाप्रांशुर्महात्मना ॥११३॥

इसी प्रकार महात्मा श्रीसुमन्त्रजी ने श्रीराम जी की सवारीके लिये महान् प्रकाशमान शत्रुञ्जय हाथी को सुन्दर सजा करके तैयार करवाया ॥११३॥

अलङ्कारै रास्तरणै विंमानेनाति शोभितः ॥
सज्जीकृत्य समानीतो नृपमन्दिरगोपुरे ॥११४॥

दिव्य अलंकार और बिछावनों से अति शोभित विमान हाथी के ऊपर सज करके उस हाथी को राज मन्दिर के फाटक पर खड़ा किया ॥११४॥

पुनस्तेन वशिष्ठोपि ह्यनुनीतो विधानवित् ॥
तदा श्रीमद्वशिष्टेन शुभलग्नं विचार्य्य च ॥११५॥

उसके बाद सुमन्त्र जी ने बड़े विधान के जानने वाले श्री वसिष्ठ जी को अनुनय-विनय किया। श्रीवसिष्ठ जी ने भी शुभलग्न को विचार करके ॥११५॥

नृपागारे समागत्य ज्ञापितः कोशलेश्वरः ॥
तनुवाच तदा राजा स्वामिन्कर्ता त्वमेवहि ॥११६॥

राज दरबार में आकर श्रीकोशलेश्वर जी के पास आकर सब जनाया। महाराज ने भी श्री वसिष्ठजी को हे स्वामिन्! आप ही कर्त्ता हैं ऐसा कहा ॥११६॥

Scanned by CamScanner

तदाप्रशंस्य राजानं वशिष्टोपिमहामतिः ॥
श्रीराम मातृ सा न्निध्यमाजगाम सहर्षितः ॥११७ ॥

यह सुनकर महाबुद्धिमान श्रीवसिष्ठ जी भी महाराज की प्रशंसा करके प्रसन्न होकर श्रीरामजी की माताके पास आए ॥११७॥

राममाताकुल गुरुं दृष्ट्वा सद्यः समागतम् ॥
प्रणम्यशिरसा पादौवध्वाञ्जलिं पुरःस्थिता ॥११८॥

श्रीराम माता जी भी कुल गुरू जी को आते हुए देखकर शीघ्र उठ करके प्रणाम किया, आसन दिया, हाथ जोड़कर खड़ी होगयी ॥११८॥

ससख्याद्यासनन्दत्वा स्थापितो विनयान्मुनिः ॥
मुनिनाप्याशीर्वचनैराज्ञीसा सम्प्रयोजिता ॥११६॥

सखियों के सहित आसन पर बैठे हुये कुल गुरू जी को विनय किया, मुनिजीने भी आशीर्वाद वचनों से महारानी जी का सन्मान किया ॥११६॥

श्रीवशिष्टउवाच—आहूयात्म मन्दिराच्च रामं सुन्दर विग्रहम् ॥
मह्यं देहि दश रात्रं कार्य्ये चाद्यः शुभावहे ॥१२०॥

श्रीवसिष्ठ जी बोले कि सुन्दर विग्रह श्रीरामजी को अपने महल से बुला करके दस रात्रिके लिए शुभकार्य वास्ते हमको दे दीजिये ॥१२०॥

इत्थं वचनमाकर्ण्यमुने राज्ञी मनोगमम् ॥
लज्जया नत नेत्रा सा राममाताह्यु वाचतम् ॥१२१॥

इस प्रकार मुनि महाराजके वचन सुनकर लज्जा से नीचे नेत्र की हुई बोली ॥१२१॥

श्रीकौशल्योवाच—कौशलेश गृहेदेवयच्च यावत्सध्वास्तकम् ॥
आशीर्वादस्यभवतां नान्यद्धे तु परं कचित् ॥१२२॥

हे देव ! महाराज श्रीकोसलेश जी के घर में जितनी भी जो सुन्दरता है वह सब आपके आशीर्वादसे हमको प्राप्त है। आपके आशीर्वाद के अतिरिक्त और कोई सुन्दरता हममें नहीं है ॥१२२॥

आबलतोद्य पर्य्यन्तं सभ्रातृ रघुनन्दनः ॥
नानाविघ्न भयेभ्यस्तुभवद्भि रक्षितः स्वयम् ॥१२३॥

भ्राताओं के सहित ये रघुनन्दनजी जन्म से आज पर्यन्त विविध प्रकार के विघ्न भयों से स्वयं आपने ही रक्षाकी ॥१२३॥

त्वं देव रविवन्शानां साक्षात्परम् देवता ॥
भुक्ति मुक्ति प्रदो नान्यस्त्वाम्विना स्वाश्रयः परः॥१२४

हे देव ! सूर्यवंशीय राजाओं के साक्षात परम देवता भुक्ति और मुक्ति को भी प्रदान करनेवाले आप ही हैं आपके विना हम लोगों का और कोइ आश्रय नहीं है ॥१२४॥

Scanned by CamScanner

वाक्पुष्पैः पुजयित्वातु राममात्रा मुनीश्वरम् ॥
आनेतुं रामचन्द्राय प्रवोध्य प्रेषिता सखी ॥१२५॥

इस प्रकार मुनि महाराज को वचनरूपी पुष्पों से पूजा करके फिर श्रीराममाताजी ने श्रीरामचन्द्रजीको बुलाने के लिये अपनी सखीको समझाकर भेजा ॥१२५॥

दिव्य स्यनन्दन मारुह्य दासोभिः परितोवृता ॥
महाकान्तोच्चशिखिरं पताका ध्वजसंकुलम् ॥१२६॥

वह सखी अपनी दासियोंसे घिरी हुई दिव्य रथमें बैठकर महान् प्रकाशमान् ऊँचे शिखर वाले ध्वजा पताकाओं से भरा ॥१२६॥

वहुकक्ष्यान्तरं दिव्य न्मन्दिरालिभिरावृतम् ॥
कृत्रिमारण्य सम्विद्धम् तड़ागवापिका न्वितम् ॥१२७

कई आवरणों के भीतर दिव्य सखियों से भरे हुए तथा अनन्त कृत्रिम बगीचा वन तालाब वावड़ी सजावट वाले ॥१२७॥

गोपुरैः सदृशै र्द्वारैः दिव्यतोरण चित्रितैः ॥
वीरै वंर्म वरै दिंव्यैर्दासिकाभिश्चरक्षितैः ॥११८।

ऊँचे गोपुर और फाटक उनके सदृश दिव्य कपाट वाले चित्र विचित्र दिव्य तोरणोंवाले कवचों को कसे हुए वीरों से रक्षित भीतर की तरफ दिव्य दासियों से सुरक्षित ॥१२८॥

शोभितं हि चतुर्दिक्षु विशालं विश्वभावितम् ॥
विवेशराम भवनं सासखी कनकाह्वयम् ॥१२९॥

दशो दिशाओं में प्रकाश करते हुए अत्यन्त शोभित समस्त विश्वसे भावित बहुत बड़े विशाल श्रीकनकभवन नाम से प्रसिद्ध श्रीरामभवन में उस सखीने प्रवेश किया ॥१२९॥

कक्ष्याः सर्वा लंघयित्वा मध्यभागं मनोहरम् ॥
अनन्तार्क प्रभाप्रख्यं प्राप्तासा वनिता कुलम् ॥१३०॥

समस्त आवरणों को उल्लंघन करके मध्यमें अनन्त सूर्यों के समान प्रकाशमान मनोहर महल में पहुँची जहाँ पर अनन्त स्त्रियाओं कीं भीड़ लगी है ॥१३०॥

श्रुत्वा तदागमं रामः प्रियां शय्यां विहायवै ॥
तस्याश्च सन्निधिं शीघ्रं सम्प्राप्तः सु नताननः ॥१३१॥

उप माताजीका आगमन सुनकर श्रीरामजी अपनी प्रियाव शय्या को छोड़ कर उन उपमाताजी के समीप शीघ्र आकर नतमस्तक हुए ॥१३१॥

कथं नाहूतदूतेन स्वयं मातः समागता ॥
इत्थं तामब्रवीद्रामः समानीय करद्वयम् ॥१३२॥

हे माता ! दूत के द्वारा मुझे क्यों नहीं बुला लिया था ? आप स्वयं क्यों आयीं ? इस प्रकार माता जी को कहते हुये श्रीरामजी माता जी के दोनों हाथों को पकड़कर उचित आसन पर बैठाये ॥१३२॥

Scanned by CamScanner

शील सर्व गुणानांहि कारणं शृणु पार्वती ॥
यद्राम सदृशं लोके नापरे दृश्यते मया ॥१३३॥

श्री शङ्कर जी बोले हे पार्वती ? सुनो सर्वगुणों का कारण शील है। मैंने श्री राम जी के सदृश शीलवान ऐसा कहीं किसी लोक मे किसी को नहीं देखा है ॥१३३॥

ततः सीतापि सुमुखी सखीभिः परिवारिता ॥
आगत्य वन्दितौ तस्याः पादौ मन्दिरमागता ॥१३४॥

इसके बाद सुन्दर मुख वाली श्रीसीताजी भी अपनी सखियों से घिरी हुई आकर के अपनी सासु को सखी के चरणों में प्रणाम कर भीतर महल में चली गयी ॥ १३४ ॥

सारामम‌ङ्कमारोप्य स्वस्याश्चागम कारणम् ॥
कथितं विधिवत्सर्वं श्रीकौशल्या प्रबोधितम् ॥१३५॥

वह उपमाता श्री राम जी को अपनी गोदी में बैठाकर अपने आने का कारण श्रीकौसल्या माता की कही हुई बात को विधि पूर्वक सब कह सुनायी॥ १३५ ॥

मन्दिरान्तरमागम्य तदाश्रीरघुनन्दनः ॥
प्रियायैः श्रावितं सर्वं प्रेम निर्भर मानसा ॥१३६॥

सुनकर श्री रघुनन्दन जी भीतर आकर अपनी प्रिया को प्रेम पूर्ण होकर के सब सुनाए ॥ १३६

प्रबोधिता पिरामेण स्वात्मछायेव जानकी ॥
साध्वीपति हितकरा रामस्तस्याहिते रतः ॥१३७॥

अपनी छाया के सदृश साधु स्वभाव वाली प्रियाजू को जानकर श्री राम जी ने पति हितकारा प्रिया के हित के लिए प्रबोधित किया ॥ १३७ ॥

पुन धात्र्यासमंराम आगत्य पितृ मन्दिरम् ॥
संस्पृश्य गुरु पादाब्जं मातुश्च चरणे नतः ॥१३८॥

उसके बाद श्री राम जी उन अपनी धाई के साथ पिता जी के महल में आए। गुरू महाराज के चरण स्पर्श किए। माता जी के चरणों में प्रणाम किए ॥ १३८ ॥

यात्रापिगुरुणा सर्वं पितुरादेशितं हियत् ॥
श्रावितं रामचन्द्राय तेनवै शिरसा धृतम् ॥१३९॥

श्री माता जी और गुरू महाराज ने भी कोसलेश महाराज की कही हुई सब बातोंको श्री रामचन्द्र जी के लिए सुनाया। श्री रामजी ने भी सिर से धारण किया ॥ १३९ ॥

एतस्मिन्नन्तरे देवि कौशलेन्द्रो महा द्युतिः ॥
सुमन्तादि मंत्रिभिश्च पुत्रैस्तु लक्ष्मणादिभिः ॥१४०॥

श्री शङ्कर जी बोले हे देवि ? इसी बीच में महान् प्रकाशमान श्रीकोशलेन्द्रजी अपने मंत्री और लक्ष्मणादिक पुत्रों के सहित ॥१४०॥

हर्षितो ह्यागत स्तत्र द्रष्टुं रामाभिषेचनम् ॥
ततो गानश्च वाद्यैश्च वेदानांहि विधानतः ॥१४१॥

अत्यन्त हर्षित होकर श्री राम जी के विवाहिक अभिषेचन को देखने के लिए वही स्थान पर आ पहुँचे जहाँ पर श्रीराम जी का सुन्दर गान बजान वेदध्वनि विधान पूर्वक होरहा था ॥ १४१ ॥

हरिद्रा चूर्ण स्नेहाभ्यामुद्वर्त्य रघुनन्दनः ॥
स्नापितः स्त्री जनैर्दिव्यै वंस्त्रैश्चापिह्यलंकृतः ॥१४२॥

हरिद्राचूर्ण और तेल आदि से श्री रघुनन्दन जू का उबटन हो रहा था। उसके बाद स्नान हुआ स्त्रियों ने दिव्य वस्त्रों से श्रीराम जी का शृंगार भी किया ॥ १४२ ॥

अकारि भोजनं मात्रा मिष्टं मोदक पूपकम् ॥
भ्रातृभिः सहितः पश्चाद्भूषणैश्च विभूषितः ॥१४३॥

बाद को माता ने लड्डू और पुआ आदिक मिष्ठान्न पदार्थोंको भाइयों सहित भोजन कराया पश्चात फिर भूषण सजाए गये ॥ १४३ ॥

गुरु पत्नी नमस्कृत्य मातृ पादाभि बन्दनम् ॥
अभिवंद्य पितुः पादौ समच्र्याथ गणाधिपम् ॥१४४॥

इस प्रकार श्री राम जी गुरू पत्नी को नमस्कार किए माता पिता जी के चरणों में अभिवन्दन तथा गणेश जी का पूजन किए ॥ १४४ ॥

आज्ञापितो बसिष्ठेन स्वारुरोह गतोच्चकम् ॥
तदा गज विमानस्थः सुशुभे रघुनन्दनः ॥१४५॥

बाद को श्री वसिष्टजी की आज्ञा से शत्रुञ्जय हाथी की पीठ पर बहुत ऊचे विमानमें चढ़कर अत्यन्त शोभित हुए ॥१४५ ॥

सौवर्ण सूत्रांचित कञ्चुक श्रीः किरीट कोट्यर्क प्रभाजितः श्रीः॥
मुक्ता लशत्कुण्डल कर्णयोः श्रीर्विभाति रामो बर वेष कृच्छ्री॥१४६

स्वर्ण सूत्र से बने कञ्चुकको अङ्ग में पहिने हुए सुन्दर शोभायमान करोड़ोंसूर्यों के समान प्रकाशमान मुकुट को मस्तक में पहिने हुए नासार्माण दोनों कानों में कुन्डल पहिने हुए दुलहा बेष में श्री राम जी अत्यन्त शोभायमान हो रहे हैं ॥१४६ ॥

पीनोल्लशद्बाहु स कङ्कण श्रीः केयूर मुक्ताञ्चित मण्डल श्रीः ॥
करांगुली मुद्रिकयालशच्छ्री र्विभाति रामो वर भूषण श्रीः॥१४७॥

हृष्ट पुष्ट हाथों में कङ्कण तथा बाहुओंमें बिजायठ, अँगुलियों में मुद्रिकाऐं इस प्रकार मणि मुक्ताओं के भूषणों में सजे हुए दुल्हा वेष श्रीराम जी अति सुन्दर लग रहे हैं ॥ १४७॥

लशत्कपोलान्तर कुण्डल श्रीर्भाले विशाले तिलकालक श्रीः ॥
नासैक मुक्ताधर लम्बित श्रीर्विभाति रामोक्षि युगायत श्रीः १४८॥

Scanned by CamScanner

कपोलों पर सुन्दर कुण्डल झलझला रहे हैं। विशाल मस्तक में श्रीतिलक शोभित है नासिका में मुक्ता अधरों तक झूल रही है दोनों विशाल नेत्रोंके कटाक्ष अद्भुत शोभित हो रहे हैं ॥१४८॥

वक्षोज्वल द्रत्न गुणांचित श्रीनिष्कादि हारान्वित भूषण श्रीः ।

गम्भीर नाभ्या छवि गर्त्तक श्री विभाति रामो वर वेषकृच्छ्रीः॥१४९

वक्षस्थल में उत्तम रत्नों की लर लटकी हैं। विसकोमतीय स्वर्ण रत्नों के हार आदिक भूषण और नाभि की गम्भीरता मानो छवि का कुण्ड हो। इस प्रकार दुलहा वेष श्रीराम जी अति शोभित हो रहे है ॥१४९॥

कराङ्घ्रि जावाञ्जन स्रग्स्वक श्रीः काश्मीर जन्माङ्ग विलेपन श्रीः॥

पादाङ्ग ठेनाति विमोहन श्रीर्विभाति रामोंघ्रि नखायत श्रीः ॥१५०

हाथों में मेंहदी चरणों में महावर, नेत्रों में अञ्जन सर्वांग में केशर आदि अङ्गराग का लेपन, चरणों में नूपुर और चरण अंगूठादि नखों के प्रकाश इन सब सजावटों से अत्यन्त मनमोहन सजे हुए श्रीरामजीअत्यन्त शोभायमान हो रहे हैं ॥१५०॥

इत्थं नाग विमान रत्न खचिते सौमित्रिणा सेवितः,

पश्चाच्चामरग्राहिणा विलशिते मार्त्तण्ड कोटि प्रभे ॥

नाना देश निवासिभि नृप सुतैर्दासैर्वयस्यैस्तथा,

रामः काम कलाप सुन्दर वपुः सद्भूषणैः संबभौ ॥१५१॥

इस प्रकार हाथी के ऊपर रत्न खचित विमान में चवर लिए हुए लक्ष्मणजी से सेवित श्री राम जी करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशमान हो रहे हैं नाना देशों के रहने वाले राजकुमार दास सखा आदि सद्भूषणों से सजे उन सब सेवकों से सेवित श्रीरामजी काम की कला को विजय करने वाले शोभित हो रहे हैं ॥१५१॥

किं श्रंगार रसा संख्येर्गजे रूपं प्रकल्पित्तम् ॥

असंख्य सुखमाभिः किंधृतं रूपं विमानवत् ॥१५२ ॥

क्या असंख्य शृंगार रसों ने ही हाथी के रूप को धारण कर रक्खा है? अथवा क्या असंख्य प्रभा शोभाओं ने ही विमान का रूप धारण कर रक्खा है? ॥१५२॥

काम कोट्यैक मूर्त्तिः किं राजते रघुनन्दनः ॥

उत्प्रेक्षतंतुकविभिर्गजा रूढे रघूत्तमे ॥१५३ ।

क्या करोड़ों कामदेवों की छवि हो मूर्ति होकर रघुनन्दन जी ही शोभित हो रहे हैं। इस प्रकार हाथी पर बैठे हुए श्री राम जी के लिए कवियों ने अनेक प्रकार उत्प्रेक्षा किया ॥१५३॥

आज्ञया राज राजस्य श्री मद्दशरथस्यतु ॥

चचालासंख्य सेनाङ्गं महा दुन्दुभि नोदिते ॥१५४ ।

राजराजेश्वर महाराज श्री मद्दशरथ जी की आज्ञा से असंख्य सेनाओं सजी बराद महा दुन्दुभी का नाद करते हुए चल पड़ी ॥१५४॥

Scanned by CamScanner

शतघ्नीनां महाशब्दैर्गर्ज्जिताश्च दिशोदश ॥
रथाश्वानां किङ्किणीभिर्झंकृता सर्वतो दिशः ॥१५५॥

तोप मशीनगनों की महान आवाज से दशों दिशाऐं गुञ्जित हो गयीं तथा इसी प्रकार रथ घोड़े आदिकों के किंकिणियों का झनकार भी सब दिशाओं में फैल गया ॥१५५॥

तथैव गज घण्टैश्च नादितास्तु दिगंतकाः ॥
अन्येषांतु वादित्राणां शब्दैश्च पूरितं वियत् ॥१५६॥

उसी तरह से हाथियों के घण्टे दिशाओं को गुञ्जित कर रहे हैं। अन्य बाजाओं की आवाज ने आकाश को भर दिया है ॥१५६॥

विगतोर्मि विलाशाश्च बभूवुः सागराअपि ॥
तथावाता अपि प्राप्ता शान्तिर्वाय्युद्धतंचि तेः ॥१५७॥
इत्थं चमत्कृते यानकंपयन्य र्वतान्महीम् ॥
प्रस्थितं रामचन्द्रस्य घर यान सुदर्शनैः ॥१५८॥

इस प्रकार के चमत्कार से पर्वतों और पृथ्वी को कपाते हुए दर्शकों की भीड़ के देखते हुए रामचन्द्र जी की बरात चलने पर समुद्र अपली लहरों के विधान को त्याग दिये ? वायु भी पृथ्वी की उड़ी हुई धूल के आधार शान्त हो गयी ॥१५७-१५८॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नामद्विपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५२॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नामद्वि पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५२॥

शिव उवाच--वासस्तुवर जानस्योल्लंघ्य दुर्गाणि सप्तच ॥
बभूव प्रथमः श्रीमत्प्रमोदारण्य सन्निधौ ॥१॥

श्री शङ्कर जी बोले कि इस प्रकार श्री राम जी की वरात श्री तयोध्या जी से चलकर नगर के सातों आवरण बाहर सातों परकोटाओं से भी बाहर श्री मत्प्रमोदवन के समीप में प्रथम रात्रि का निवास हुआ ॥१॥

पुनः प्रभाते त्वरुणोत्थ काले नेदुर्महादुन्दुभि सूच्चनादम् ॥
श्रुत्वा जनास्तत्र निवर्त्य निद्रां स्व सज्जना र्याहि प्रवर्त्तितास्ते ॥२॥

फिर प्रातः काल होने पर महान् दुन्दुभी का ऊँचा नाद हुआ यह सुनकर वरातियों की नीद निवृत्त हुई ? अपनेर कार्यों में लग गए ॥२॥

द्वितीय नादे तुदिगंत मूर्च्छिते ववन्ध व्यूहानि यथा क्रमेणवै ॥
चचाल यानं तु तृतीय नादिते मार्गे प्रदीपैर्वहुभिः प्रदर्शिते ॥३॥

Scanned by CamScanner

धिर दूसरी वार दुन्दुभी के नाद होने पर वरात अपनेर सजावटों से सजकर चलने को तैयार हुई। तीसरी वार के दुन्दुभी नाद होने पर दीप वृक्षों सजे हुए मार्ग में वरात आगे के लिए चल पड़ी॥३॥

अतः परं शृणु श्री मज्जानकी पादशीलके ॥
चरितं चाद्भूतं गोप्यं यंन जानाति कोपि च ॥४॥

हे जानकी पाद शीले! इसके आगे बड़ा अभ्दुत गुप्त चरित्र हुआ जिसको सब कोई नहीं जानते हैं उसको मैं कहता हूँ, सुनो ॥४॥

सेना मुखेत्वग्रसरा महावीराः समाहिताः ॥
तैर्दृष्टं गोपुरं मार्गे विशालं तेजसांचयम् ॥५॥

वरात के आगेर चलने वाली महान् धीर सिपाहियोंकी जो सेना उन्होंने आगे चलते हुए मार्ग में एक बहुत बड़ा फाटक अभ्दुत प्रकाशमान देखा ॥५॥

अन्तर्द्वार सहस्रञ् च नीम्न मार्गां तथोत्तरं ॥
विविशुस्ते तु रामस्य स्वेच्छया नाद्रिजे क्वचित् ॥६॥

उसके भीतर में हजारों द्वार सुन्दर विस्तार वाले मार्ग बड़ी सजावट से सजे देखे। हे पर्वत कन्यके! श्री राम जी की स्वतंत्र इच्छा से प्रेरित होकर वह बरात उस फाटक के भीतर प्रवेश कर गयी॥६॥

ततो नु विविशः सर्वा अक्षौहिण्योप्यनेकशः ॥
चरित्रे तद्वशिष्टश्च रामो जानाति नापरः ॥७॥

अगुआ लोगों के प्रवेश करने पर सारी अक्षौहिणी सेना सब बरात उसमें प्रवेश कर गयी परन्तु इस चरित्र को श्री राम जी और वसिष्ट ची के सिवाय दूसरा कोई भी न जानपाया ॥७॥

ततश्चाग्रे सरैर्दृष्टं वनं गम्भीर मद्भुतम् ॥
वहुवर्णैः पादपैश्च सफलैः संकुलं महत् ॥८॥

फाटक के भीतर कुछ दूर आगे जाने पर एक गम्भीर वन बहुत से अभ्दुत सरोवर रङ्गर के बहुत से वृक्ष महान् फलों से लदे हुए ॥८॥

प्रफुल्ल गुल्म लतिकं फलपक्क रसाश्रयम् ॥
तडाग वापिका युक्तं पुष्प वाटी समन्वितम् ॥९॥

तथा छोटेर खिले हुए वृक्ष और लताएं रस टपकते हुए पके फल झुके हुए इस प्रकार वन तालाब वावड़ी पुष्प वाटिकाएं अभ्दुत शोभा देखी ॥९॥

सर्वत्र काञ्चनी भूमि द्रुम कक्ष्या विभाविता ॥
यत्र तत्र भवनानि मनोज्ञानि जनैः सहः ॥१०॥

सर्वत्र स्वर्णमयी भूमि सुन्दर विभाग पूवक जहां तहां वृक्षों की पंक्तियां जहाँ तहां उचित स्थानों पर सत जनों से भरेहुए मन रमणीय महल सब दीख पड़े ॥१०॥

एतद्वनान्तरे दृष्टं दुर्गं दुर्गान्तरं बृहत् ॥
स्फाटिकै रँचितं दिव्यं दीप्ति मत्परमाभ्दुतम् ॥११॥

इस प्राकर के बहुत बड़े वन के भीतर भी एक बहुत बड़ा फाटक परकोटा के सहित दिव्य स्फटिक मणि से रचित परम अभ्दुत देखा ॥११॥

गो पुराणितु चत्वारि चतुर्दिक्षु समन्ततः ॥
रक्षितानि महावीरै र्महेष्वासैर्दृढ़ व्रतैः ॥१२॥

उस परकोटे में चारों दिशाओं में बड़े २ फाटक, फाटकों के ऊपर बड़े२ गोपुर, द्वारोंपर बड़े २ बलवान दृढ़ व्रत महा धनुषधारी वीर रक्षा करते हुए दीख पड़े ॥१२॥

आगच्छन्ति प्रगच्छन्ति चातुर्वर्णया जना अपि ॥
विलक्षण दिव्य रूपा दिव्य वाहन संस्थिताः ॥१३॥

उन फाटकों में चारो वर्ण की जनता विलक्षण दिव्यरूप, दिव्य वाहनों पर बैठे आते जाते दीख पड़ते हैं ॥१३॥

एवं दृष्ट्वा वशिष्ठं तु सुमन्तश्चाब्रवीन्मुनिम ॥
कुत्रागता वयं नाथ को लोक इति विस्मितः ॥१४॥

इस दृश्य को देखकर महामंत्री श्री सुमंत्र जी श्री वसिष्ट जी से चकित होकर पूछे कि हे नाथ यह किस लोक में हम लोग आ गए हैं ॥१४॥

पश्याम्यत्र जनाः सर्वे वृद्धाश्च पलितालकाः ॥
न बालाश्च युवानोपि दृष्ट पूर्वा इव भ्रमाः ॥१५।

हमको यहां की जनता सब बूढ़े ही बूढ़े पके बाल वाले ही दीख पड़ते हैं यहां कोई बालक या जवान नहीं दीख पड़ता। अपूर्व की तरह यह भ्रम पैदा करता है ॥१५॥

हित्वा मार्गं भ्रमेणैव पाताल लोक मागताः ॥
किं करोमि क्व गच्छामि त्वं समर्थोसि तद्वद ॥१६॥

क्या हम लोग भ्रम से मार्ग छोड़ करके पाताल लोक में आ गये हैं ? अब मैं क्या करूं ? इस बरात को लेकर कहां जऊँ आप ही सब बात में समर्थ हैं इसलिए कहिए ॥१६॥

इत्थं चाकुलतां दृष्ट्वा सुमन्तस्य महामुनिः ॥
मागाः भयंत्वं मतिमान सुमन्तमिति चाब्रवीत् ॥१७॥

सुमंत्र जी की इस प्रकार की व्याकुलता को देखकर महामुनि वसिष्ठ जी बोले कि तुम भय को मत प्राप्त हो ओ ॥१७॥

सुमन्त गोप्यं चरितमहं जानामि नापरः ॥
रहस्ये कथनीयं स्यान्न सर्वेषांहि शृण्वताम् ॥१८॥

हे सुमंत्र इस गुप्त चरित्र को मैं जानता हूँ और कोई नहीं जानता इसलिए सबके सामने कहने लायक नहीं है मैं तुम से एकान्त में कहूँगा ॥१८॥

संस्तभ्य सेना सुखमायतं तदावतार्य्य रामं गजतः सलक्ष्मणम्॥
घने वने वीक्ष्य विशाल वेदिकां तस्थौ वशिष्टोप्यथ मंत्रिणासह ॥१९

इतना वसिष्ट जी के कहते बहुत बड़ी बरात के अगुए लोग स्तम्भित हो गए। श्री राम जी और लछमण जी को हाथी पर से जमीन में उतार दिया। अगल बगल बहुत बड़े बन के बीच एक विशाल वेदी पर सुमन्त्र जी के सहित श्री वसिष्ठ जी बैठ करके बोले। ॥१६॥

वशिष्ठउवाच—शृणुसूत कुलाम्भोज दिनेशस्त्वं महामतिः ॥
श्री मद्दशरथा दूद्धां इक्ष्वाकोरूत्तराश्चये ॥२०॥

हे सूत ? सूर्य कुल कमल के खिलाने वाले तुम महान बुद्धिमान हो। श्री मद्दशरथ जी से ऊपर और इक्ष्वाकु महाराज के बाद बीच में जितने भी राजा हुए ॥२०॥

तेषां पद मयं लोकोयोध्यायाश्चरणाव्हयः ॥
पुरोयत्पश्यसि पुरं तत्तु सुकृत शालिनः ॥२१॥

वे सब इस श्री अयोध्या जी के चरण स्थान नामक इस लोक में जिस नगर को आप सामने देख रहे हैं वे पुण्यशाली राजा इसी नगर में वास करते हैं ॥२१॥

ज्ञान शक्ति वलैश्वर्य्य तेजो वीर्य्य वतस्तथा ॥
भोगैश्वर्य्याधिक स्यास्ति श्री मतो जस्य काञ्चनम् ॥२२॥

इन लोगों का ज्ञान, शक्ति बल, ऐश्वर्य तेज, वीर्य छओ भगशब्द वाच्य ऐश्वर्यों के भोगों को भोगते हुए निवास करते हैं। उन्ही श्री मान् अज महाराज का यह अपूर्व महल है ॥२२॥

अस्य पूर्व तराण्येवं पूर्वजानां पुराणि च ॥
सन्ति दिव्य तराण्यात्मवतां सच्चित्स्वरूपिणाम् ॥२३॥

इसी प्रकार इनके पूर्वजों के भी नगर दिव्य से भी दिव्य महान् प्रकाशमान हैं जिनमें सच्चिदानन्द स्वरूप मनस्वी महान् प्रतापी लोग निवास करते हैं ॥२३॥

सपत्नीकाः प्रजाभिश्च वृध्दाभिश्च समन्ततः ॥
परस्परं स्नेह बद्धावसन्ति स्यात्मनः स्थलम् ॥२४॥

ये इक्ष्वाकु वंशीय राजा लोग अपनी पत्नी और प्रजा के सहित सब बूढ़े परस्पर स्नेह में बँधे हुए अपने२ अधिकार के अनुसार स्थलों पर निवास करते हैं ॥२४॥

सर्वे ते वेदसारज्ञा वेदै र्गीता महाशयाः ॥
श्री रामेवत्सलाः सर्वे योगध्यान परायणाः ॥२५॥

ये सबके सब वेद के मर्म को जानने वाले महान् विचार वान श्री राम जी में वात्सल्य भाव रखने वाले योगध्यान परायण वेदों से स्तुत्य हैं ॥२५॥

शित केशादिव्य रूपा भूषणांगा मनोहराः ॥
क्रीड़ा केलिसमायुक्ताः श्री रामोत्सव संभृताः ॥२६॥

ये सबके सब सफेद ही बाल वाले दिव्य स्वरूप सब प्रकार भूषणों से सजे मनोहर अङ्ग विविध प्रकार के क्रीड़ा विलासों में आसक्त बाल भाव से श्री राम जी के लिए उत्सव करते हैं ॥२६॥

Scanned by CamScanner

अयन्ति राग रागिण्यो वसन्ता धर्त्तवस्तथा ॥
देवा अपि महेन्द्राद्या अप्सरो नाग किन्नराः ॥२७॥

इस लोक में रहने वाले इन सबकी राग रागिनियां बसन्त आदिक ऋतु तथा महेन्द्र देवता अप्सरागण नाग किन्नर सब कोई सेवा करते हैं ॥२७॥

ऋद्धयः सिद्धयः सर्वानिधयोपि सुखानि च ॥
श्री राम पूर्वजांस्तांश्चवध्वांजल्यः पुरः श्रिताः ॥२८॥

इसी प्रकार ऋद्धि सिद्धि सर्व निधियां सब सुख भी हाथ जोड़करके श्री राम जी के पूर्वजों के आगे खड़े रहते हैं ॥२८॥

इत्थं व्यवोध यद्यावद्वशिष्ठो भगवान्मुनिः ॥
मंत्रिणांहि ददर्शाग्रे प्रसरत्प्रलयांवुवत् ॥२९॥

इस प्रकार भगवान मुनि श्री वसिष्ठ जी मंत्री जी को प्रबोधित कर ही रहे थे कि तब तक आगे में प्रलय के समुद्र उमड़ते सरीखा दीख पड़ा है ॥२९॥

महा कोलाहले नैव मनुष्याणां प्रधावताम् ॥
शूलासि शक्ति हस्तानां कोटि२ सहस्र शः ॥३०॥

दौड़ते हुए मनुष्यों का महान् कोलाहल आ रहा है कोई सूल लिए कोई शक्ति को हाथों में लिए करोड़ों अर्बों की संख्या में चले आ रहे हैं ॥३०॥

सेनाग्रास्तत्समालोक्य भ्रमापन्नाः समन्ततः ॥
समीपेतु वाशिष्ठस्य समाजग्मुर्द्रुता वहुः ॥३१॥

• श्री राम जी के बरात के सेनापति लोग चारों तरफ से इस अभ्दुत दृश्य को देखकर भ्रम में पड़ गये। सब सेनापति श्री वसिष्ठ जी के समीप में दौड़ पड़े ॥३१॥

मागुर्भयं क्वाचि द्विरा ममदर्शन हेतवे ॥
आयाति नृप शार्दूल इति ते मुनिनोदिताः ॥३२॥

श्री वसिष्ठ जी ने सब सेनापतियों को कहा कि हे वीरों ? तुम लोग डरो मत। ये सब भीड़ महाराज राजशार्दूल श्री अज जी की ? मेरे दर्शन के लिए आ रहे हैं ॥३२॥

इत्यंतरे चतुर्दिक्षु पूरितेतु जनार्णवे ॥
नौकेव दर्शितं दिव्यं विमानं तेजसाश्वयम् ॥३३॥

इतना मुनि महाराज के कहते२ चारों तरफ से जन समूह रूप समुद्र उमड़ आया इस जन समुद्र के मध्य में नौका की तरह महान् प्रकाशमान विमान दीख पड़ ॥३३॥

हस्त्यश्व रथ पादाति नरजान पुरः सरम् ॥
कोटिभिः प्रतिहाराणां रत्न दण्ड भृतांतदाः ॥३४॥

हाथी घोड़े रथ पैदल तथा सुखपाल आदि हवारियाँ करोड़ों की संख्या में प्रतिहारियों से और रत्न दण्ड धारियों तथा ॥३४॥

वादित्राणां महानादै र्गज घण्ट सुनादितैः॥
पूरयत्सर्व दिग्भ्रान्त शोभते परमाद्भुतम् ॥३५॥

बाजा वालों से और महाघन्टाओं का नाद करते हाथियों के समूह से समस्त दिशाएं भरी हुई परम अद्भुत शोभित हो रही हैं ॥३५॥

चत्वारः प्रतिहारास्तु चतुरा दण्ड धारिणः॥
समागत्य मुनेरग्रे बद्धांजलि समास्थिताः ३६॥

चार प्रतिहारी लोग हाथों में रत्न दण्डों को लिए हुए बड़े चतुर श्री मुनि महाराज के आगे आकर हाथ जोड़कर के खड़े हो गए ॥३६॥

तांश्चारानाहतै र्वाग्भिः पप्रच्छ मुनि पुङ्गवः ॥
के भवन्तः कस्य राज्ञ इति मां प्रति कथ्यताम् ॥३७॥

उन चारों प्रतिहारियों का मुनिश्रेष्ठ वसिष्ठ जी ने वचन से आदर किया और पूछा कि आप किस राजा के कौन लोग हैं, हमारे से कहिए ॥३७॥

प्रणम्य चारास्तु मुनेः पदाब्जयो-
तस्त्रैक मुख्यः समुचाव निर्भरः ॥
चारा महाराज तवैव सर्वदा-
भवान्नवेत्सीति त्रिकाल दर्शनः ॥३८॥

उन प्रतिहारियों ने मुनि महाराज के चरणों में प्रणाम किया, एक मुख्य ने प्रेम में भरकरके कहा कि हे महाराज हम आपके ही सब दिनके प्रतिहारी (दूत) हैं आप त्रिकाल दर्शी हैं क्या हमको नहीं जानते हैं? ॥३८॥

सर्वार्थ सिद्धो महिपाल मौलिर्जितारिवर्गस्तुभवत्प्र सादात् ॥
अजोजितस्त्वच्चरणारविन्दं समर्च्चितु र्हर्षित मागतः सः ॥३९॥

सब प्रकार के अर्थों में सिद्ध महिपाल मुकुठ मणि आपकी कृपा से शत्रुओं की विजय करने वाले अजेय महाराज श्री अजजी आपके चरण कमलों का दर्शन और पूजा के लिए बड़े हर्ष में भरे आ रहे हैं ॥३९॥

तेन महेन्द्रेण च प्रेषिता वयं विज्ञापनागमनं हि स्वात्मनः ॥
तत्किं न जानीथ त्रिकालदर्शना स्तथापिनीतिः कथिता महात्मभिः ॥४०

उन्हीने हमको अपना आगमन जनाने के लिए भेजा है। क्या त्रिकालदर्शी आप नहीं जानते हैं? महात्माओं की यह निती है अतः हमने कहके भी सुनाया है ॥४०॥

इति सम्भाष्यस दूतः पुनश्च मुनिमब्रवीत् ॥
लभामहे चेदनुज्ञां भवतां दूतका वयम् ॥४१॥

इतना कहनेके बाद फिर उन दूतों ने मुनिजी से हम लोग आपके दूत हैं अब आप यदि हमको आज्ञा दें तो ॥४१॥

Scanned by CamScanner

पश्यामो राम सत्पौत्रं रवेर्वंश विवर्द्धनम् ।।
वर वेष विराजंतं नेत्र तृप्ति करं परम् ।।४२

सूर्य वंश को बढ़ाने वाले सत् पौत्र श्री राम जी का नेत्रोंको तृप्त करनेवाला परम सुन्दर दुल्हा वेषका शृंगार किए हुए श्री राम जी का दर्शन करें ।।४२।।

इत्युक्त्वा विह्वलदशां प्रेम्णा तेषां मुनिश्वरः ।।
समीपे रामचन्द्रस्य प्रेषितास्तु जनैः सह ।।४३।।

इस प्रकार प्रेम में अत्यन्त विह्वल दशा को प्राप्त हुए उन दूतों की बातों को सुनकर श्री वसिष्ट जी ने सब साथियों के सहित उन दूतों को श्री राम जी के पास भेजा ।।४३।।

प्रेमांकित जड़ीभूता दूतास्ते राम सन्निधौ ।।
जनै नींतास्तु रामेण स्वय मुत्थायश्लेपिताः ।।४४।।

श्री राम जी के पास पहुँच कर वे दूत प्रेम की विचित्र दशा में जड़ की तरह हो गए उनके अनुनायी जन उठाकरके उनको श्री राम जी के पास ले गए श्री राम जी भी स्वयं उठकरके आगे आये उन दूतों को गले से लगाया ।।४४।।

निवेश्यांकेतु श्री रामं चुचुंव वदनंहिसः ।।
उवाच धन्य धन्योस्मि पौत्रमं के निधायवै ।।४५।।

उन दूतों ने श्रीरामजी को गोदी में रखकर मुख का चुम्बन किया और अपने पौत्र को गोदी में रखने से हम धन्य हैं, हम धन्य हैं- ऐसा कहने लगे ।।४५।।

क्रीडि तस्ते पिता तात स्वस्मिन्नंकेनिधाय च ।।
अद्य धर्म्य तमः स्यामश्चुम्बना त्पौत्रते मुखम् ।।४६।।

हे वत्स ? हमने तुम्हारे पिता को भी इसी प्रकार गोदी में रख करके खेल खिलाया है। आज हम लोग धन्य हो गए जो पौत्र के मुख चुम्बन करने मिल गया ।।४६।।

दर्शितुं गुरु पादाव्जं मुखंते मङ्गलास्पदम् ।।
आयाति ते महाय्यों सावजोयो लोक विश्रुतः ।।४७।।

हे वत्स श्री गुरु महाराज के चरण कमल दर्शन के लिए और मङ्गल के निवास स्थान आपके मुख चन्द्र के दर्शन लिए तुम्हारे दादा जी आ रहे हैं जो अजनाम से सम्पूर्ण लोक में प्रसिद्ध हैं ।।४७।।

पिता महया समेतस्ते त्वयि वात्सल्य निर्भरौ ।।
पिता महौ समायातौ यौ लोकानन्त पूजितौ ।।४८।।

वात्सल्य प्रेम में भरे हुए आपके दादी के सहित दादा आ रहे हैं जो अनन्त लोकों पूजित हैं।।४८।।

माधूर्य्ये संज्ञानका ये श्रुत्वैवं वचनं सतां ।।
बभ्रमु र्विस्मयं प्राप्य कथं संभाव्यते त्वयम् ।।४९।।

इस प्रकार उन सज्जन दूतों के माधुर्य देशिक अनुराग में भीजे हुए बचनों को सुनकर श्री राम

जी के जो प्राकृतिक साथी थे वे सब के सब विस्मय को प्राप्त हो गए कि इन महान् दूतों का किस प्रकार से आदर किया जाय और ये लोग किस तरह से श्री राम जी में भाव रख रहे हैं ॥४६॥

तान्बोधितुं तु श्री रामो विस्मितं चेष्टयन्नपि ॥
पिता महौ कुतौ मेऽत्र धर्मज्ञो स्वर्ग संगतौ ।५०॥

उन सबको समझाने के लिए आश्चर्य चकित चेष्टाओं को दिखाते हुए श्री राम जो उन दूतों से पूछने लगे कि स्वर्ग में गए हुए बड़े धर्मात्मा मेरे पितामह इस समय कहाँ पर हैं ॥५०॥

जन उवाच॥ शृणु वत्स पूर्वजास्ते त्वयि वात्सल्य भावुकाः
आवैकुण्ठा द्गतयोपि नित्यैक रूप संस्थिताः ॥५१॥

वे दूत बोले कि हे वत्स सुनो तुम्हारे में वात्सल्य भाव से भरे हुए तुम्हारे पूर्वज वैकुण्ठ से लेकर जितने भी गति वाले हैं वे सब नित्य एक रूप होकर के इसी स्थान पर रहते हैं ॥५१॥

नित्यैः परिछदैर्युक्ता वयस्तुल्यैश्च सेवकैः ॥
वयस्तुल्यैः प्रजाभिश्च राजते स्वात्म वैभवैः ॥५२॥

अपने नित्य परिकरों के साथ अपनी एक सदृश अवस्थाओं से सेवक सेवा समानावस्था वाले तथा राजा प्रजा रूप से समान वैभववाले ॥५२॥

वयस्तुल्येः परिजनैः काल कर्म्म विवर्जितैः ॥
ब्रह्मानन्द सदाध्यासात् महार्घ्यास्ते सनातनाः ।५३॥

और जितने भी परिजन हैं वे सब भी काल कर्म के बन्धन से मुक्त हुए अपने राजा सदृश समानावस्था होकर ब्रह्मानन्द के सहज स्वभाव वाले सनातन महान् श्रेष्ट वे सब अपने२ महाराज के साथ समानावस्था होकर इसी स्थान पर निवास करते हैं ॥५३॥

शास्तारः सर्व लोकानां रचितारः स्वतेजसाः ॥
वेदज्ञा वेद गीताश्च गो ब्राह्मण सुसेवकाः ॥५४॥

अपने तेज से सम्पूर्ण लोकों के शासन करने वाले वेद के मर्मज्ञ, वेद का गान करने गौ और ब्राह्मणों के सुन्दर सेवक॥५४॥

सर्व विद्या भिः सम्पन्नाः सर्वशास्त्र विशारदाः ॥
नितिज्ञाः परमोदारा धर्म्म बद्धा धनायताः ॥५५॥

सब विद्याओं में सम्यक्र प्रकार सम्पन्न सब शास्त्र पारङ्गत नीति को जानने वाले परम उदार धर्म से सुन्दर तरह बँधे हुए इच्छा भर के धन वाले ॥५५॥

तेजो बलैश्वर्य युक्ताः सर्वदा दीन वत्सलाः ॥
प्रजासुपुत्रवद्भावा दाने देव द्रुमैः समाः ।५६॥

तेज बल ऐश्वर्य से युक्त हमेशा दीनों पर वात्सल्य रखने वाले, प्रजा पर पुत्र की तरह भाव रखने वाले, दान में कल्प वृक्ष के समान ॥५६॥

Scanned by CamScanner

सदा प्रसन्न वदनानिर्दोषगुणनिर्म्मलाः ॥
वाक् पटुज्ञान विज्ञाना मधुवाचास्मिताधराः ॥५७॥

सदा प्रसन्न वदन सब दोषों से रहित निर्मल गुण वाले बोलने में बड़े चतुर जड़ चेतन विभाग को जानने वाले और अपने सहज स्वरूप के कर्तव्य को जानने वाले, मीठा बोलने वाले मन्द मुस्क्याते हुए मुखचन्द्र अधर वाले ॥५७॥

आवृद्ध शुभ शोभाङ्गा सबलाजानु बाहुकाः ॥
अनालस्योत्साह युक्ताः पञ्च रूपेण वर्त्तिनः ॥५८॥

अपने पूर्वजों के सहित सब सुन्दर शोभायमान अङ्ग वाले महान बलवान जंघा पर्यन्त भुजा वाले आलस्य से सहित सुन्दर उत्साह वाले अग्नि इन्द्र चन्द्रमा यमराज वरुण ये पांच देवताओं के रूप धारण करके वर्ताव करने वाले ॥५८॥

आत्मकार्य्य समं मत्वा प्रजानां कार्य्य संभृताः ॥
प्रजाभिः प्रिय माणाश्च सर्वलोक प्रियङ्कराः ॥५९॥

अपनी आत्मा के कार्य के समान प्रजा के काय को जानकर करने वाले प्रजा जनता के सहित अत्यन्त प्रसन्न मन हुये, सम्पूर्ण लोकों को प्रिय करते हुये सर्वलोक प्रिय ॥५९॥

चारु नेत्राः प्रजानां च दर्शने सुख दुःखयोः ॥
प्रजा मोदेन मुदिता स्तथा दुःखेन दुःखिताः ॥६०॥

प्रजा जनता को अपने गुप्तचरों द्वारा देखने वाले अपनी समस्त जनता के दुखसुख को जानने वाले प्रजा की प्रसन्नता से प्रसन्न होने वाले तथा प्रजा के दुख से दुखित होने वाले ॥६०॥

पितरौ सेवकानां च स्वात्मानो बान्धवेष्वपि ॥
पालका ब्रह्म सृष्टीना मन्यत्किं वर्णयाम्यहम् ॥६१॥

अपने पितरों में और सेवकों में तथा अपनी आत्मा व बन्धु वर्गों में भी कहाँ तक हम वर्णन करें सम्पूर्ण ब्रह्म सृष्टि भरके पालन करने वाले ॥६१॥

तपस्सु महर्षितुल्या विज्ञाने मुनिभिः समाः ॥
कलासुविश्वकर्म्माणस्त्वगाधाश्च यथार्णवाः ॥६२॥

तपस्याओं में महर्षियों के समान विज्ञान में मुनियों के समान कलाओं में विश्वकर्मा के समान गम्भीरता में समुद्र के समान ॥६२॥

मेरुतुल्या चल गुणैः क्षमा तुल्याः क्षमागुणैः ॥
तत्सद्ब्रह्मेव सत्यास्ते किमन्यद्वर्णयामिते ॥६३॥

सुमेरु पर्वत के समान अचल गुण वाले, पृथ्वी के समान क्षमा गुण वाले, सत्य में तत् सत् ब्रह्म के समान और हम कहाँ तक वर्णन करें ॥६३॥

शक्तो नवक्तुं रवि वंशजानां गुणानहीशो वदनैः सहस्रैः ॥
वाग्देवता व्यास कवीश्वरोपि कथंतदेतानहमातनोमि ॥६४॥

सूर्यवंश में जितने भी राजा हुए उनके गुणों को वर्णन करने में मैं समर्थ नहीं हूँ। हजार मुख शेष जी भी नहीं वर्णन कर सकते हैं। सरस्वती, व्यास, कवीश्वर भी नहीं वर्णन कर सकते तब हम उनके गुणों को कैसे बिस्तार वर्णन कर सकते हैं ॥६४॥

येच्वाकवश्च काकुत्स्था राघवाश्च महोदयाः ॥
महात्मानोपिते सर्वे बृद्धाबृद्ध प्रजा समाः ॥६५॥

इक्ष्वाकु वंशीय ककुस्थ रघु सरीखे महान प्रतापी राजा उदय हुए। सबके सब महात्मा, वे भी सबके सब बृद्ध ही अपने सदृश बृद्ध स्वरूप प्रजा के सहित ॥६५॥

बृद्धैस्तु परिवारैश्च नारी पुरुष रूपकैः ॥
तथा सेवक संघैश्च स्वात्म धर्म्म विशारदैः ॥६६॥

बृद्ध परिवार वाले स्त्री पुरुष रूप में तथा सब सेवक समूह में सबके सब बृद्ध सबके सब अपने अपने धर्म में निपुण ॥६६॥

अयोध्या चरणेत्वत्र महाभोग समन्विताः ॥
पृथक्पुरेनित्य दिव्ये वसन्ति च समाहिताः ॥६७॥

यह श्रीअयोध्या जी का चरण स्थान महान ऐश्वर्य भोग से पूर्ण लोक है इसमें अलग २ पुरी करके नित्य दिव्य सावधानता से परस्पर स्नेह पूर्वक निवास करने वाले ॥६७॥

त्वां पौत्र रत्नं परमं ध्यायंतः सुख निर्भराः ॥
धन्यधन्य तमा द्धन्या वय मेवेति सन्मताः ॥६८॥

उत्तम पौत्रों में रत्न स्वरूप आपको ध्यान करते हुए सुख में भरे रहते हैं। जितने भी धन्य हैं उनमें धन्यतम हम धन्य हैं इस प्रकार हृदय में भाव रखने वाले सज्जनों से सम्मत हैं ॥६८॥

तत्र शंङ्का बाल भावात्कुरुषे रघुनन्दन ॥
सत्वंतल्लोक भिन्नत्वे केषां शंका न जायते ॥६९॥

हे रघुनन्दन! आप बालक स्वभाव से जो प्रश्न कर रहे हैं सो यह आपकी बाल लीला है। इस लोक से भिन्न जो वह दिव्य लोक है उसके विषय में किसको शंका न हो जायगी ॥६९॥

अलौकिकाः पूर्वजास्ते लोके लोके न वर्त्तकाः ॥
दुर्विज्ञेयं तु चरितं तेषां विद्वज्जनेरपि ॥७०॥

आपके पूर्वज अलौकिक हैं वे हर लोक में व्यवहार नहीं करते हैं क्योंकि उनका चरित्र बड़ा ही दुर्ज्ञेय है। विद्वान जन भी उनके चरित्र को नहीं जान पाते ॥७०॥

अनाद्यन्ताः पूर्वजास्ते लोके चाद्यन्त दर्शकाः ॥
नवं नवं दर्शयन्ति कुलो भय विधायकाः ॥७१॥

आपके पूर्वज आदि अन्त से रहित हैं और इस लोक के आदि अन्त को दिखाने वाले हैं। मातृ कुल-पितृ कुल दोनों को सुन्दर विधान करके नवीन २ चरित्रों को दिखाते हैं ॥७१॥

Scanned by CamScanner

लोकानां धारणे साक्षात्सहस्र शिर सेवते ॥
महात्म्यं श्रुतयस्तेषां गायन्ति ऋषयस्तथा ॥७२॥

सब लोकों को धारण करने के लिये साक्षात हजार सिर वाले शेष जी के समान बलवान हैं उन आपके पूर्वजों के महात्म को वेद और ऋषि महात्मा लोग गान करते हैं ॥७२॥

शिवोवाच—अत्युच्छ्रितं स्वात्म पितामहानां महत्व माकर्ण्य रघूद्वहस्तु॥
स्वस्मिन्हि वात्सल्य निवद्ध भावं प्रणम्य चारं च चचार शंसाम्। ७३

श्रीरामोवाच--अहं न जानामि पितामहानां-
जानासि यत्वं महतां प्रभावम् ॥
पितामहेनापि समंहि मन्ये-
द्वैधं न जानामि वदामि सत्यम् ॥७४॥

श्रीशंकर जी बोले कि हे पार्वती ! इस प्रकार श्रीरामजी ने अपने पूर्वजों के महान् महत्व को सुन करके और अपने में उन लोगों का वात्सल्य भाव जान करके उन दूतों को प्रणाम किया और इस प्रकार श्रीरामजी बोले—हे दूतों ! अपने दादा परदादा उनके लोगों के महत्व प्रभाव को मैं नही जानता । आप लोग जो महत्व प्रभाव जानते हैं इस नाते मेरे दादा जी के सदृश ही आप लोग हैं दूसरे नहीं हैं यही मै जानता हूँ अत: आपसे सत्य कहता हूँ ॥७३-७४॥

सत्यं वदाम्यात्म स्वभाव यादृक्किमन्यथा वादकृतेन लोके ॥
पितुर्यवस्यानपि दास वर्गं पश्यामि पित्रा सदृशं सदैव ॥७५॥

मेरा जैसा स्वभाव है उस अनुसार मैं आप लोगों से सत्य कह रहा हूँ लोक में अन्यथा बात करने से क्या फायदा । मेरे दादा जी के आप लोग सखा भी हैं दास भी हैं अतः मेरे पिता जी के सदृश ही आप हैं ऐसा हमेशा मैं देखता हूँ ॥७५॥

मातुश्च दास्योममातरः स्युर्दास स्तु मन्ये सममातुलेन ॥
तथा सखा यस्तु सहोदरा मे न चान्य भावो हृदये कदाचित् ॥७६

मेरी दादी की जो दासी हैं वे मेरी माँ के सदृश हैं । मेरी दादी के जो दास हैं वे मेरे मामा के सदृश हैं उनके जो बाल बच्चै हैं वे मेरे ममुहर भाई बहिनों के सदृश हैं और उनके जो सखा लोग हैं वे मेरे सहोदर भाईके समान हैं इसी प्रकार मेरे हृदयमें भाव रहता है और तरह से नहीं ॥७६॥

श्रीरामचन्द्रानन तच्छ्रुतं परं वाक्यामृत कर्ण पुटे निपीयसः ।।
उवाच दूतोप्यति प्रेम निर्भरः प्रशंसयन्भाग्यं परं महोदयम् ॥७७॥

श्रीरामजी के मुख रूपी चन्द्रमा से इस प्रकार की बोली रूपी अमृत कान रूपी दोना से पान करके अत्यन्त प्रेम में निर्भर हुए दूत अपने भाग्य के महान् उदय को परम प्रशंसा करते हुए इस प्रकार बोले ॥७७॥

धन्योस्मि धन्योस्म्यहमद्यतात श्रुत्वा वचस्ते बदनं च दृष्ट्वा ॥
आजन्म तोद्य क्षणमेव लब्धा कर्ण द्वयेनाक्षि द्वये न तृप्तिः॥७८

Scanned by CamScanner

हम धन्य हैं, हम धन्य हैं। हे तात ! आज आपके बचनों को सुन करके और आपके मुख-चन्द्र को देख करके अपने जीवन भर में आज के ही क्षण को हम धन्य मानते हैं जो अपने दोनों कानों और नेत्रों से मन भर के बोली सुने, रूप देखे, तृप्त हुए ॥७८॥

सरस्त्वयोध्या परमोत्तमं स्यादीक्ष्वाकवस्तत्र सरोजकानि ॥
तेषां प्रबोधाय रविस्त्वमा सीत्तत्ते गुणानां कथने प्रभू कः ॥७६॥

हे तात ! श्रीअयोध्या जी एक सरोवर है ये जितने भी इक्ष्वाकु वंशीय राजा हुए सबके सब कमल हैं। इन सब कमलों को खिलाने के लिए आप सूर्य के समान हैं इस प्रकार के आप, अब आपके गुणों को कथन करने में कौन समर्थ है ॥७६॥

हरिर्न ब्रह्मा न हरः शरास्यो न सर्पराजो द्वि सहस्र जिह्वः ॥
मुनिस्तुयत्कोटिशतं विधायन लब्धवान्सोपि परहि पारम् ॥८०॥

आपके गुणों को वर्णन करने के लिये तो न विष्णु, ब्रह्मा शंकर, जी समर्थ हैं जो कि चार हाथ चार मुख व पांच मुख वाले हैं और न तो दो हजार जिह्वा वाले शेष जी ही समर्थ हैं और जिन्होंने सौ करोड़ की संख्या के विस्तार में रामचरित्र को लिखा वे मुनि वाल्मीकि जी भी आपके चरित्र का पार नहीं पाये ॥८०॥

संस्थाप्य वीणा जघने घन स्वरां-
ब्राह्मी तु हर्षा श्रु स्नुपतपयोधरा ॥
कीर्तिं च ते गार्यात धातृसद्मनि -
वीणाधरो नारद उद्धृत स्वरैः ॥८१॥

और जो अपने जघन में वीणा को स्थापित करके अपने पयोधरों में स्पर्श करते हुये वीणा के गम्भीर नाद के साथ आँखों से स्नेहमयी अश्रुधारा बहाती हुई ब्रह्मा जी के लोक में बैठकर ब्राह्मणी और वीणा को धारण किये हुए श्रीनारद जी भी सातों स्वरों से अलाप लेकर आपकी कीर्ति का गान करते हुए भी पार न पाये ॥८१॥

स्फीता गुणास्ते रघुराज सूनो स्फीतश्च रूपं मुनि मोहनं ते ॥
स्फीतश्च स्नेहोप्यति दास वर्गे स्फीताः श्रियस्ते सकलाङ्गः भूताः॥८१

हे रघुराज सुनो ! मुनियों के मन को मोहित करने वाला आपका अद्भुत रूप और अद्भुत विस्तार गुण ये सब अतिशय महानता के साथ आपके सेवकों में अतिशय अनुराग उत्पन्न करने वाला महान् है जिस आपकी कीर्ति के अङ्गभूत अनन्त ऐश्वय सब है ॥८२॥

रूपार्णवे ते च गुणार्णवेपि मनांसि मीनाः सुविदां निमग्नाः ॥
चरित्र चिन्त मणि भूषिता ये तेत्यक्त भूषा विचरन्ति लोके ॥८३

हे राम ! आपके रूप समुद्र में और गुण समुद्र में जिन विद्वानों का मन मछली की तरह से मगन मन होगया है वे विद्वान आपके चरित्र रूपी चिन्तामणियोंकी मालाओं से भूषित हुए अन्य भूषणों को त्याग करके आनन्द मग्न हुए लोकों में विचरते हैं ॥८३॥

Scanned by CamScanner

यैः स्वाम्बके अम्बक भोगरूपं शौन्दर्य शीलं निहितं तवैव ।।
अनन्त कन्दर्प विदर्पकारंतेमुद्रिताक्षाहि चरन्ति लोके ।।८४।।

जिन्होंने शंकर जी के भोग स्वरूप आपके रूप शौन्दर्य शील को अपने नेत्र से पीकर हृदय में रख लिया है वे अनन्त कोटि कन्दर्प के दर्प को नाश करने वाले आपकी सुन्दरता को देखकर आंख बन्द किये सर्वलोक में विचरते हैं ।।८४।।

इत्थं दूतस्तु श्री रामगुणान्वक्ति मनोहरान् ।
तावच्छ्रीम दजो राजा मुनेः सानिध्यमाप्तवान् ।।८५।।

श्रीशङ्करजी बोले कि इस प्रकार दूतों ने श्रीराम जी के मनोहर गुणों का वर्णन किया तब तक महाराज श्री अज जी श्रीबसिष्ठ जी के समीप आ पहुँचे ।।८५।।

दूरादवतीर्य्य यानात्संस्पृशन्पादयोर्मुनेः ।।
स पुनःस्थापितश्चाग्रेह्याशीर्वाग्भिः प्रपूजितः । ८६।।
अयोध्या वासिनो विप्रास्तान्ववन्दे नरेश्वरः ।।
अन्ये सभा सदा ये च सुमन्ताद्याः सुविस्मिताः ।।८७

दूर से ही अपनी सवारी से नीचे उतर करके मुनि महाराज के चरणों का स्पर्श किये और श्री बसिष्ठ जी ने भी आशीर्वाद दिया, अपने आगे आसन दिया, वचन से स्वागत किया। और अयोध्या-वासी जितने भी ब्राह्मण थे उन सबको महाराज ने प्रणाम किया और भी जितने सभासद थे तथा सुमंत आदिक मन्त्री थे सबके सब आश्चर्य चकित हुए ।।८६-८७।।

पुनः प्रभावं विज्ञाय ववन्दिरे महेश्वरम् ।।
महाराज्ञापि सहितं देव्या परम वृद्धया ।।८८।।

•फिर महाराज अज के प्रभाव को जानकर प्रणाम किया। परम वृद्धा महारानी जी के साथ महेश्वर महाराज श्री अज भी सबको आशीर्वाद आश्वासन दिये ।।८८।।

पुनश्च सुस्थिरां कृत्वा वशिष्ठो बृहती सभाम् ।।
आपृच्छत्कुशलं प्रश्नं ते नोक्तं दर्शनात्तव ।।८६।।

इसके बाद श्रीबसिष्ठ जी ने उस महान सभा के कोलाहल को शान्त करके महाराज अज से कुशल प्रश्न किये। श्रीअज महाराज ने भी आपके दर्शन से सब कुशल है ऐसा उत्तर दिया ।।८६।।

राज्ञोऽजस्य प्रजाः सर्वा वृद्धानुगाश्च वान्धवाः ।।
ववन्दिरे मुनेः पादौददृशुर्ह्यात्मजान्पुनः ।।६०।।

महाराज अज जी के साथी जितने भी सब वृद्ध २ प्रजा और साथी संगी वान्धव सब वृद्धों ने श्रीबसिष्ठ जी के चरणों में प्रणाम किया फिर और अपने वंशज कुमार श्रीरामजी का दर्शन किया ।।६०।।

श्रीमदजस्य सभायां पितरं च स्वकं स्वकम् ।।
प्रलेभिरे महाश्चर्य्यं दृष्ट्वा सर्वे मुदा अपि ।।६१।

महाराज अज जी की सभा में अपने २ पितरों को भी देख करके सभी बराती लोग आनन्द मग्न हुए महा आश्चर्य को प्राप्त किए ।।६१।।

श्रीराम लक्ष्मणौ चाथ समाहूय मुनीश्वरः ॥
प्रेरयित्वात्मना तौ च पातितौ पदयोस्तयोः ॥९२॥

और श्री बसिष्ठ जी ने भी श्रीराम-लक्ष्मण जी को बुलाकर फिर स्वयं आज्ञा देकर के महाराज अजजीके चरणोंमें प्रणाम कराया ॥९२॥

द्वाभ्यां च स्थापितावंके श्रीराम लक्ष्मणौ सुतौ ॥
तदा चाघ्राय मूर्धानं ययतुः परमं सुखम् ॥९३॥

और श्री अज जी ने भी दोनों पति पत्नी ने श्री राम जी व लक्ष्मण जी दोनों पौत्रों को गोदी में बैठाकर सिर सूँघे महान सुखको प्राप्त हुए ॥९३॥

मनोहरं सुवदनं पौत्रयो र्वीक्ष्य वीक्ष्यतौ ॥
पितामहौ महात्मानौ लेभाते सुखमद्भुतम् ॥९४॥

पौत्रों के मनोहर मुखचन्द्रों को देख देखकर दादा दादी दोनों महात्मा अभ्दुत सुख को प्राप्त किए ॥९४॥

चुचुम्बतुश्च वदनं राम लक्ष्मणयो र्मुहुः ॥
पादयोर्हस्तयो रेषाः सौभाग्य सूचकाहिया ॥९५॥

श्री राम लक्ष्मण जी के मुखचन्द्र का बार२ मुख चुम्बन किए। कर चरणों के सौभाग्य सूचक रेखाओं को देख देखकर अति हर्षित हुए ॥९५॥

ताः पश्यन्तौ महाग्र्यौ तौ स्वभाग्यं च प्रशंसतु ॥
दृष्ट्वा सर्वाङ्गं सुखमां महानन्दे ममज्जतुः ॥९६॥

महान् श्रेष्ठ दोनों दम्पति अपने पोताओं के सर्वाङ्ग परमा शोभा को देखर कर महा आनन्दमें मग्न हुए और अपने भाग्यकी प्रशंसा करने लगे ॥९६॥

वारं वारं पौत्रपौत्र प्रेम्णा वदति सुस्वरः ॥
आनीय हृदये गाढं चिबुकं चुम्ब्य पश्यति ॥९७॥

बार२ अनुराग से हे पौत्र ? हे पौत्र ? ऐसा कहते हुए सुन्दर स्वर से बिनोद किए हृदय से लगाए। चिबुक को पकड़कर बड़े गाढ़से चुम्बन किए और मुखचन्द्र देखे ॥९७॥

देवि रामो लक्ष्मणोपि तयोरंके महार्य्ययोः ॥
अभूदापञ्च वयसा बाल चेष्टां दधन्नपि ॥९८॥

महाराज अज जी और उनकी पत्नी श्रीराम लक्ष्मणजीको अपनी गोदीमें लिए हुए पाँच बर्षकी उम्र से बालक सदृश चेष्टा करते हुए श्री राम लक्ष्मण जी ने भी अपने दादा दादी को अति सुखी किया ॥९८॥

तयो रानन्द मादातुं श्रीरामो लक्ष्मणस्तथा ॥
अभवद्बाल रूपेण तन्न जानन्ति केचनः ॥९९॥

उन दोनों को आनन्द देने के लिए श्रीराम लक्ष्मण जी बालक सरीखे पाँच वर्ष के हो गए यह बात कोई भी नहीं जानने पाया ॥६६॥

आनन्दजाश्रु सिक्तास्यो वशिष्ठं प्रत्युवाचसः ॥
प्रशंसयन्नात्म पुत्रं श्रीमद्दशरथं विभुम् ॥१००॥

आनन्द से आखों में आँसू बहाते हुए महाराज अज जी श्रीवसिष्ठजी के सामने महान ऐश्वर्यमान अपने पुत्र श्री दशरथ जी की प्रशंसा करने लगे ॥१००॥

मुनिराज प्रसादात्ते सर्व सिद्धि प्रदस्यवै ॥
अभवद्धि महाभागः पुत्रो मे दशस्यन्दनः ॥१०१॥

हे मुनिराज ? सब सिद्धियों को देने वाली आपकी कृपा से मेरा महान् भाग्यशाली दशरथ नाम का बेटा हुआ ॥१०१॥

यस्य चैवोच्छ्रितां कीर्तिं वीणया नारदो मुनिः ॥
गायति ब्रह्म लोकेऽपि ह्यानन्दाश्रु प्लुताननः ॥१०२॥

जिनकी बढ़ी हुई कीर्तिका वीणाधारी नारद मुनि आनन्द अश्रुओंकी मुख पर धारा बहाते हुए ब्रह्मलोक मेंगीत गाते हैं ॥१०२॥

मुखाद्यस्य चतुर्वेदा निःसृता लोकः विश्रुताः ॥
तस्यात्मजो भवान्साक्षात्पुरोधा यस्य सोभवत्॥१०३॥

क्यों न हो जिन ब्रह्मा जी के चारों मुख से चार वेद उत्पन्न हुए जो लोक में प्रसिद्ध हैं उन्ह ब्रह्मा जी के श्रेष्ठ पुत्र आप साक्षात् जिसके उपरोहित हो गए ॥१०३॥

तस्य लोकोत्तरं यद्यत्सुखं सिद्धि जयो यशः ॥
भवेत्तत्र किमाश्चर्य्यं प्रभावो वार्क सादृशः ॥१०४॥

उसके भाग्य में जो२ लोकोत्तर सुख, सिद्धि,जय, यस प्राप्त हो तथा सूर्य के सदृश प्रभाव लोकमें प्रकाशित हो इसमें आश्चर्य ही क्या है ?॥१०४॥

यद्भूतं यद्भविष्यन्ति यच्च वृत्तं हि दृश्यते ॥
तत्सर्वं भवतः पाद पूजाया फल मेवहि ॥१०५॥

हे महाराज ! जो आज तक हुआ और आगे होगा और जो दृश्य प्रतक्ष्य दीखरहा है वह सब आपकी चरण पूजा का फल है ॥१०५॥

विना श्रीमद्गुरोरंघ्रेः सर्व भावेन पूजनं ॥
कृत्वा सुखं कुतो लभ्येदन्योपायैः सहस्र कैः ॥१०६॥

श्रीसद्गुरु जी के चरण कमलों की सर्वभाव से विना पूजा किए अन्य हजारों उपाय करने पर भी कहाँ मिल सकता है ॥१०६॥

दण्डवत्पतिता भूमौ गुरोरग्रे तुये नराः ॥
न तेषां हि भयं लोके कालोपि मन्यते भयम् ॥१०७॥

जो मनुष्य गुरू महाराज के आगे पृथ्वी में दण्ड की तरह गिर पड़ते हैं उनको लोक में कोई भय नहीं है ऐसे भक्त से काल भी डरता है ॥१०७॥

गुरोरंघ्रि जलं येन धृतं शिरसि भावतः ॥
सर्व तीर्थेषु निस्नातं तेन वै विधि पूर्वकम् ॥१०८॥

जिसने भावपूर्वक गुरु महाराजके चरणामृत को सिर से धारण किया उसने विधि पूर्वक सब तीर्थोंका स्नान कर लिया ॥१०८॥

येनार्पितं तु गुरवे सर्वं यत्स्वात्मकं धनम् ॥
अक्षयं च धनं प्राप्य पुनर्मोक्षं स गच्छति ॥१०९॥

जिसने अपने आत्मीय सर्वस्व धन को गुरु महाराज के लिए अर्पण कर दिया है वह अक्षय धन को प्राप्त करके अन्तिम में मोक्षधाम में जाता है ॥१०९॥

ये तु षोड़श विधिना कुर्वन्ति गुरु पूजनम् ॥
पूर्ण चन्द्र इवा भांति ते लोके नात्र संशय ॥११०॥

जो षोडशोपचार विधि से गुरु महाराज का पूजन करते हैं वे चन्द्रमा की तरह लोक में प्रकाशित होते हुए सर्वलोक में प्रकाशमान होते हैं इसमें कोई संशय नहीं है ॥११०॥

ब्रह्मादयोपि पूतां स्तान् गुरु पादाब्ज सेवकान् ॥
प्रशंसया पूजयन्ति स्वलोका गमनेच्छया ॥१११॥

इस प्रकार गुरु चरण कमल के सेवकों को अपने लोक में ले जाने की इच्छा से ब्रह्मादिक देवता लोग उन भक्तों की प्रशंसा और पूजा करके प्रसन्न करते हैं इस तरह करने पर स्वयं अपने को पवित्र मानते हैं ॥१११॥

गुरूत्सवं प्रकुर्वन्ति प्रेम्णा वित्त व्ययेनये ॥
नित्योत्सवो गृहे तेषां न विघ्नानिवसन्ति च ॥११२॥

जो प्रेम पूर्वक महान् वित्त व्यय करके गुरु महाराज का उत्सव करते हैं उनके घर में नित्य उत्सव हुआ करते हैं ऐसे भक्तों को कभी विघ्न बाधा नहीं करते ॥११२॥

दधन्ति च गुरोः पाद रजांसि मस्तके नराः ॥
तान्सुराहि नमस्यन्ति तत्रान्येपान्तुका कथा ॥११३॥

जो मनुष्य गुरु महाराजके चरणरज को सिर पर धारण करते हैं उन भक्तों को देवता लोग भी नमस्कार करते हैं और की क्या कथा है ॥११३॥

ये चाश्नन्ति गुरुत्सृष्टं भावेन भक्तितः सदा ॥
तेतु वाह्यांतरः पूतास्तरन्ति भव सागरम् ॥११४॥

जो भाव पूर्वक नित्य भक्ति से गुरोच्छिष्ट सेवन करते हैं वे वाहर भीतर सब तरह से पवित्र होकर भव सागर से तर जाते हैं ॥११४॥

Scanned by CamScanner

पूजयन्ति तु हर्य्यर्चां ये विना गुरु पूजनम् ॥
न प्रसीदति हरिस्तेषु कल्पकोटि शतैरपि ॥११५॥

जो बिना गुरु महाराजकी पूजा किये भगवान् की पूजा करते हैं उनसे भगवान सौ करोड़ कल्प में भी प्रसन्न नहीं होते हैं ॥११५॥

विना गुरुं नमस्कृत्वा हरिं नमस्करोति यः ॥
न पश्यतिहरिस्तस्य मुख मागस्कृतस्य वै ॥११६॥

गुरु महाराज को बिना नमस्कार किए ही जो भगवान को नमस्कार करते हैं भगवान उनके मुख को नहीं देखते हैं भले हीं वह भगवान के सामने बैठा हो ॥११६॥

श्री गुरोर्भुक्ति शेषं तु प्रथमं यो भुनक्तिवै ।
पश्चाद्धरि प्रसादं च महापुन्यं प्रजायते ॥११७॥

जो प्रथम गुरु महाराज के भोग शेष प्रसाद को पाकर तब पीछे भगवान का प्रसाद पाते हैं तब उनको महान् पुण्य होता है ॥११७॥

गुरु प्रसाद माहात्म्यं न वक्तुं कोपि शक्तये ॥
व्यति क्रमेण पापस्य न संख्या मीयते नरः ॥११८॥

श्रीगुरू महाराज के प्रसाद के महात्म को कहनेके लिये कोई भी समर्थ नहीं है। इससे विपरीत मनुष्य कितना पापको प्राप्त होता है इसकी कोई संख्या नहीं है॥११८॥

श्रीमद्गुरुःपाद पांशु मूलाधर्माः समंततः ॥
तद्विना निर्मूलास्ते कथं फल प्रदानृणाम् ॥११६॥

समस्त धर्म चारों तरफ से श्रीमद्गुरु चरण धूलि से ही मूल उत्पन्न होते हैं। गुरु चरण धूलि के विना मूल रहित सब धर्म कैसे मनुष्यों को फल देने वाले होंगे? अर्थात् नहीं होंगे ॥११६॥

श्रुतिमूलं गुरोर्वाक्यं पूजा मूलं गुरोः पदम् ॥
धर्म्म मूलं गुरोः सेवा शुभमूलं गुरोः कृपा ॥१२०॥

वेद का मूल गुरु की वाणी है। पूजा का मूल गुरु महाराज के चरण हैं, धर्म का मूल गुरु महाराज की सेवा है। कल्याण का मूल गुरु महाराजकी कृपा है ॥१२०॥

श्रीमद्गुरु विहीना ये गुरौस्नेह विवर्जिताः ॥
न द्रष्टव्यं मुखं तेषां संगतिस्तु कुतः शुभा ॥१२१॥

जो गुरु नहीं किये अथवा गुरु महाराज के चरणों में जिनका स्नेह नहीं है उनका तो मुख भी नहीं देखना चाहिये संगति को कहना ही क्या ॥१२१॥

राजा विवेकशाली यो दृष्ट्वा चैतादृश नरम् ।
श्रुत्वा वा गर्धभेस्थाप्य स्वदेशादाशु प्रक्षिपेत् ॥१२२

इस प्रकार के गुरु विमुख मनुष्यों को देखकर अथवा सुनकर विवेकशाली राजा को चाहिए कि उसे गधे पर बैठाकर अपने देश से शीघ्र निकाल दे ॥१२२॥

Scanned by CamScanner

अहोभाग्यमहोभाग्यं जानाति गुरु मीश्वरम् ॥
निषेवेत्सततं प्रीत्या सोप्यन्येषां शुभ प्रदः ।।१२३।।

अहोभाग्य है कि जो गुरू को ईश्वर मान करके सावधान होकर बड़े अनुराग से सेवा करता है। वह अपना कल्याण तो करता ही है उसके दर्शन से अन्य सब जीवोंका कल्याण होता है ॥१२३॥

ना वैष्णवं गुरुं कुर्य्यान्ना नीतेर्मार्गं संसरेत् ॥
न द्रोहं प्राणिनां कुर्य्यान्न च पापं समारभेत्।१२४।।

परन्तु गुरु अवैष्वण अन्यायी नहीं होना चाहिये। जो वैष्णव नहीं है, नीति मार्ग से नहीं चलता, समस्त प्राणियों से द्रोह करता है और पापाचारी है उसे गुरू नहीं बनना चाहिये॥१२४॥

स्तुति व्याजाद्गुरो राज्ञा कथिता नीतिपृत्तमा ॥
नीति व्याजा त्स्तुस्तिस्तस्य कृता सद्गुणशालिना॥१२५

इस प्रकार श्रीशंकर जी बोले कि हे पार्वती! महाराज श्रीअज जी ने श्रीगुरु महाराज की स्तुति के बहाने गुरूको आज्ञा पालन और उत्तम नीतिकी शिक्षा दिया और इस गुरू अनुकूलता नीतिके बहाने श्रीगुरू महाराज की स्तुति भी की। इस प्रकार सद्गुणशाली महाराज श्रीअजजी को ॥१२५॥

ततः परं सतां श्रेष्ठं तं स्तुवंश्च मुनि प्रभुः ॥
उवाच सततं देवि वचनं लोक शीक्षकम् ॥१२६॥
कथं न वदसी त्येवं सर्व लोक गुरुभवान् ॥
धर्म्मेषु सर्व वर्णानां बोधं कृत्वा प्रवर्त्तकः ।१२७।।

गुरु स्तुति करते हुए सन्तोंमें श्रेष्ठमान करके श्रीवसिष्ठजी लोकशिक्षामयवचन बोले—हे राजन! क्यों न आप ऐसा कहेंगे क्योंकि आप सर्व लोक गुरू हैं और सब वर्णों के धर्म बोध कराने वाले लोक शिक्षक और धर्म प्रर्वतक हैं ॥१२६-१२७॥

त्वं साक्षाद्धर्म्म मूर्तिः स्यान्नीति रूपो विशांपते ॥
तत्फलं पश्यत्वं स्वां के लब्धं के न च लभ्पते ॥१२८

हे पृथ्वीपते! आप साक्षात् धर्मकी मूर्ति और नीति के स्वरूप हैं इस धर्म नीति के फल स्वरूप ये आपकी गोदी में बैठे हुए जैसे आपने पाए ऐसा कौन प्राप्त कर सकता है॥१२८॥

त्रयाणां जनकस्यापि जनकः कोऽपि निर्णितः ॥
परं ज्योतिः परं धाम तस्य त्वं जन को महान् ॥१२९

ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीनों देवताओं का भी कोई पिता है जो परम ज्योति परमधाम इस प्रकार से वेदों द्वारा कहा गया है उनके पिता श्रीदशरथ जी और उन दशरथ जी के भी पिता आपहैं अतः आप महान् हैं ॥१२९॥

कष्टेन पूर्वजैस्ते च मार्गो धर्म्मेण साधिताः ॥
नीत्यापितपसातस्य फलं स्वां के धृतं त्वया ॥१३०॥

आपके पूर्वजों ने बड़े कष्ट के साथ धर्म का पालन किया तथा नीति पूर्वक तपस्या भी की उसी का फल स्वरूप आज आपने अपनी गोदी में इन श्रीरामजी को बैठाया ॥१३०॥

शिव उवाच–इत्थं देवि वशिष्ठस्य गर्भितं वचनं नृपः ॥
श्रुत्वा चांके स्थितं रामं लक्ष्मणं च मनोहरम् ॥१३१

श्रीशंकर जी बोले कि हे पार्वती जी ! श्रीवसिष्ठ जी ने गूढ़ तत्व गर्भित वचन जब महाराज को कहे तब श्रीअज जी महाराज अपनी गोदी में बैठे हुए मनोहर मूर्ति श्रीरामजी और लक्ष्मणजी को ॥१३१॥

प्रेम्णा गदगदात्मा सौ दृष्ट्वादृष्ट्वा मुहुर्मुहुः ॥
प्रेमाश्रूणां सुनेत्राभ्यां मुमुञ्च विन्दु मालिकाम् ।१३२

प्रेम से गद्गद आत्मा होकर बार २ देख २ कर नेत्रों से प्रेममयी अश्रु विन्दुओं की माला बरसाने लगे ॥१३२॥

ततो धैर्यं समाश्रित्य समवीक्ष्य राम लक्ष्मणौ ॥
अनयोर्जन्म योगं यज्ज्योतिर्विद्भिः सुभाषितम् ॥१३३

कुछ देर के बाद धैर्य धारण करके श्रीराम लक्ष्मण जी को देख करके इन दोनों के जन्म योगको जो ज्योतिषियों द्वारा कहा गया है ॥१३३॥

सामुद्रिकं च रेषाभिजङ्ग लेन समन्तकम् ॥
पप्रच्छ नृप शार्दूल स्त्रि कालज्ञ मुनीश्वरम् ॥१३४॥

तथा सामुद्रिक शास्त्र द्वारा रेखाओं का और अङ्ग के तिलादि चिन्हों का भी त्रिकालज्ञ मुनीश्वर श्रीवसिष्ठ जी से राज शार्दूल महाराज श्रीअज जी ने प्रश्न किया ॥१३४॥

श्रीअजोवाच-वद योगनिधे सर्वं बालयो र्भावि यत्फलम् ॥
लग्न ग्रहादि योगाना मायुः कीर्तिं चशौरताम् ।१३५

श्रीअज जी बोले ! हे योगनिधे इन बालकों के भविष्य होनहार जो फल हो लग्न ग्रह योगादिकों का भी जो फल हो तथा इनके भविष्य का पराक्रम कीर्ति जो भी हो सब कहिये ॥१३५॥

शिवोवाच–एवं पृष्टो नृपेन्द्रेण वशिष्ठो योग भास्करः ॥
प्रति नंद्य वचस्तस्य प्रति वक्तुं प्रचक्रमे ॥१३६॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि इस प्रकार महाराज अज जी के प्रश्न करने पर योगियों में सूर्य के समान श्रीवसिष्ठ जी महाराज के बचन का स्वागत करके प्रश्न का उत्तर देना आरम्भ किये ॥१३६॥

वशिष्टोवाच--शृणु राजन्महाभागद्वाविमावपरौ चद्वौ ॥
एतौ राम लक्ष्मणौ च शत्रुघ्न भरतौ पुनः ॥१३७॥

श्रीवसिष्ठ जी बोले—हे महाभागशालिन् राजन् ! सुनिये। दो पौत्र तो आपके श्रीराम लक्ष्मण नाम के ये हैं और दो पौत्र और हैं उनका नाम श्रीभरत शत्रुघन जी है ॥१३७॥

चत्वारस्ते महाभागाः पौत्राः लोकेषु विश्रुताः। ॥
गृहाशुभ गुणानां च जाता लग्न महोदये ॥१३८॥

ये चारो महाभागशाली आपके पौत्र सर्वलोकों में प्रसिद्ध होवेंगे क्योंकि ये सद्गुणों के धाम स्वरूप सुन्दर महान् लग्नयोग में प्रगट हुए हैं ॥१३८॥

भवतां सुकृत संख्या न च तेषां फलस्य च ॥
गङ्गा साक्षात्समुद्रश्च येषां पूर्तादि कर्मसु ॥१३९॥

यज्ञ पूर्तादिक (कुआ बावड़ी, बगीचा आदि बनाना) कर्मों में जो कर्म का प्रवाह है वह साक्षात् गंगा-धारा के समान आपके सुकृत रूप समुद्रमें जिस प्रकार असंख्य रूपसे गया है उसी प्रकार उनके फलोंकी भी कोई संख्या नहीं है ॥१३९॥

तेषां गृहे जन्म यस्य महा सुकृत शालिनां ॥
तस्य जन्म ग्रहावल्यां किं प्रष्टव्यं सुभार्थकम् ॥१४०॥

इस प्रकार के सत्कर्म करने वाले महापुण्यात्मा लोगों के घर में जिनका जन्म हुआ हो उनके जन्म नक्षत्र ग्रहों को क्या देखना उसके जन्म नक्षत्र तो सब सुन्दर ही फल देनेवाले होंगे ॥१४०।

तथापि ह्यनु मोदाय कथयामि महामते ॥
यदुद्यतं ग्रहाणां च फलं मङ्गल दायकम् ॥१४१॥
प्रथमं तु नृप श्रेष्ठ पुष्पर्चं परमं शुभम् ॥
दिनस्य मध्य भागस्तु परं मंगल दायकः ॥१४२॥

तो भी हे महाबुद्धिमान् अज जी आपकी मन प्रसन्नता के लिए जो उत्तम लग्न ग्रह मंगलदायक इन श्रीरामजी के जन्मकाल में हुए हैं उनका फल मैं तुमसे कहता हूँ। हे राज श्रेष्ठ! प्रथम तो इन श्रीराम जी के जन्म में पुष्य नक्षत्र से पूजित परम सुन्दर फलदायक पुनर्वसु नक्षत्र और दिन के मध्य भाग ये सब परम मंगलदायक हैं ॥१४१-१४२॥

अतः परं चैत्र मासो महा मङ्गल दायकः ॥
राजातूनां वसन्तोपि पूर्वावस्थां समाश्रितः ॥१४३॥

इससे भी आगे चैत्र का महीना महान् मंगलदायक है। इससे भी उत्तम सब ऋतुओं का राजा वसन्त भी किशोरावस्था को प्राप्त हुआ है ॥१४३॥

वृषेचार्के समापन्ने लग्न कर्के समुद्यते ॥
उच्चस्थाने ग्रहापञ्च समये त्वस्य जन्मनः ॥१४४॥
दिग्सरित्स्वं च भूर्वायुस्तथा सर्वे च प्राणिनः ॥
प्रसन्नादेव जातिश्च समये राम जन्मनः ॥१४५॥

वृष लग्न में सूर्य उदय हुए कर्क लग्न तक पहुँचे हुए हैं पांचों ग्रह ऊँचे स्थान में हैं इस प्रकार अद्भुत उत्तम समय में इन श्रीरामजी का जन्म हुआ है और श्रीराम जी के जन्म समय में दिशायें नदियां आकाश और पृथ्वी वायु तथा सभी प्राणियां और सब देव जाति उस समय सब प्रसन्न और निर्मल थे ॥१४४-१४५॥

Scanned by CamScanner

अभूत पूर्वं सर्वं च जातं श्रीराम जन्मनि ॥
किं वर्णयामि राजेन्द्र तस्य चाग्रं महोदयम् ॥१४६॥

श्रीराम जी के जन्मकाल में जो उत्तम नक्षत्र, ग्रह वार, तिथि उत्पन्न हुए ऐसा न पहले कभी हुआ था। और न आगे होगा। इस प्रकार जन्म लेने वाले इन श्रीराम जी का भविष्य हे राजेन्द्र मैं क्या वर्णन करूं ॥१४६॥

ईश्वराणामीश्वरस्येश्वरो हीत्थं मवेद्यतः ॥
सामुद्रिके लक्षणानि मुनीन्द्रै दर्शितानियैः ॥१४७॥

इस प्रकार का जन्म लेने वाला तो ईश्वरों का भी जो ईश्वर हो उसका भी वह ईश्वर होगा इस प्रकार सामुद्रिक शास्त्र के जानने वाले मुनीन्द्र लोग इन चिन्हों का लक्षण बताते हैं ॥१४७॥

सौन्दर्य्याति च सौन्दर्य्यं शीलाधिक्याति शीलता॥
वीर्याधिक्याति वीर्य्यं च विक्रमाधिक विक्रमम् ॥१४८

इस लिए हे राजेन्द्र इन श्रीरामजी के लक्षणों से यह निश्चय है कि ये रामजी सुन्दरों में सर्वोत्तम सुन्दर, शीलवानों में सर्वोत्तम शीलवान, बलवानों में सर्वोत्तम बलवान, पराक्रमियों में सर्वोत्तम पराक्रमी, वीर्यवानों में सर्वोत्तम वीर्यवान ॥१४८॥

तेजसा मधिकं तेजः प्रतापाधिक्यत स्तथा ॥
प्रतापो भू यशश्चैव कृपाधिक्यं कृपा परा ॥१४९॥

तेजस्वियों में सर्वोत्तम तेजस्वी, प्रतापियों में सर्वोत्तम प्रतापी, यशस्वियों में सर्वोत्तम यशस्वी कृपालुओं में सर्वोत्तम कृपालु ये श्रीरामजी होंगे ॥१४९॥

वैभवो वैभवाधिक्यो भोगो भोगाधिकः परः ॥
सिद्धिभ्यश्च परा सर्वाः सिद्धयो लक्षणोन्मिता ॥१५०

धनवानों में सर्वोत्तम धनवान, ऐश्वर्यवानों में सर्वोत्तम ऐश्वर्यवान, भोगियों में सर्वोत्तम भोक्ता सिद्धियों में सर्वोत्तम परा सर्व सिद्धियां- ये लक्षण बता रहे हैं ॥१५०॥

वात्सल्याधिक वात्सल्यं स्वात्मीयेषु मनोहरम् ॥
कारुण्याधिक कारुण्यं दयाधिक्या दया परा ॥१५१

वात्सल्यवानों में सर्वोत्तम वात्सलववान, अपने आश्रितों के मन को चुराने वाले, कारुणिकों में सर्वोत्तम करुणा सागर दयावानों में सर्वोत्तम परम दयालु ॥१५१॥

स्नेहाधिकतम स्नेहः प्रीत्याधिक्यं च प्रीति ता ॥
प्रेमाधिक्यः पर प्रेम्णो रागाधिक्यस्तु रागवान् ॥१५२

स्नेहियों में सर्वोत्तम सनेही, प्रीति में भी सर्वोत्तम प्रीतिता, प्रेमाधिक्यता में परम प्रेमी, अनुरागियों में परम अनुरागवान ॥१५२॥

ख्यातेश्चैवाधिका ख्यातिः सर्व लोक प्रवर्त्तिनी ॥
कीर्तेश्चैवाधिका कीर्ति धवली कृत दिग्मुखा ॥१५३॥

Scanned by CamScanner

प्रसिद्धिवानों में सर्वोत्तम सर्व लोक प्रवर्तिनी सिद्धि इन श्रीरामजी की होगी । कीर्तिमानों में सर्वोत्तम उज्ज्वल कीर्ति दशों दिशाओं को प्रकाशित करने वाली होगी ॥१५३॥

औदार्य्याधिक मौदार्य्यं यश सोप्यधिकं यशः ॥
माधूर्य्याधिक माधूर्य्यं सौम्यंसौम्याधिकं परम् ॥१५४॥

उदारों में सर्वोत्तम उदार, यशस्वियों में सबसे अधिक यश माधुर्यता में सबसे अधिक माधुर्य, सुन्दरता सुकुमारता में सबसे अधिक सुन्दर सुकुमार ॥१५४॥

बलाधिकं बलं यस्य सारं साराति सारकम् ॥
स्थैर्य्यं तु स्थैर्य्यादधिकं धैर्य्यद्वै र्य्यधिकं परम् ॥१५५

बलवानों में सबसे अधिक बलवान, सारवानों में सर्वोत्तम सारवान स्थिरता में सर्वोत्तम स्थिर, धैर्यवानों में सर्वोत्तम धैर्यवान ॥१५५॥

सामर्थ्याधिक सामर्थ्यं धारणाधिक धारणा ॥
पालनादधिकं यस्मिन्पालनं परिवर्त्तते ॥१५६॥

सामर्थ्यवानों में सबसे अधिक सामर्थ्यवान, धारण करने वालों में सबसे अधिक धारणकर्ता, पालन कर्ताओं में सर्वोत्तम पालनकर्ता ॥१५६॥

शरण्याधिक शारण्यं दानं दानाधिकं परम् ॥
मानं मानाधिकं तस्य सेवा सेवाधिका तथा ॥१५७॥

शरण्यों में सर्वोत्तम शरण्य देवता, दानियों में सर्वोत्तम दानी, मानियों में सर्वोत्तम मान्य जिनका सेव्यों में सर्वोत्तम सेव्य ॥१५७।

ज्ञानं ज्ञानाधिकं चैव शक्तिः शक्तिः शताधिका ।
काठिन्याधिक काठिन्यं मार्दवं मार्दवाधिकम् ॥१५८॥
गाम्भीर्य्याधिक गाम्भीर्य्यं मार्जवाधिक मार्ज्जवम् ॥
आर्द्रवाधिकार्द्रवं च सौहार्दाधिक सौहृदम् ॥१५९॥

ज्ञानियों में सर्वोत्तम ज्ञानी, शक्तिमानों में सर्वोत्तम अधिक शक्तिमान, कठिनता में सर्वोत्तम कठिन, कोमलों में सर्वोत्तम कोमल, गम्भीरों में सर्वोत्तम गम्भीर, सरलता में सबसे अधिक सरल, नम्रों में सर्वोत्तम नम्र, सौहार्दता में सर्वोत्तम सौहार्द वाले ॥१५८-१५९॥

दूरत्वाधिक दूरत्वं नैकट्यं निकटाधिकम् ॥
आत्मीयाधिक मात्मीयं ममत्वं ममताधिकम् ॥१६०

दूर रहने वालों में सर्वोत्तम दूर, निकट वालों में सर्वोत्तम निकट, मनस्वियों में सर्वोत्तम मनस्वी, बुद्धिमानों में सर्वोत्तम बुद्धिमान, ममता करने वालों में सर्वोत्तम ममता करने वाले ॥१६०॥

सौलभ्यं तु सौलभ्याश्च दौर्ल्लभ्यं दुर्ल्लभात्परम् ॥
ऐश्वर्य्याधिक मैश्वर्य्यं माधूर्य्यं मधुरात्परं ॥१६१॥

सौलभ्यों में सर्वोत्तम सुलभ, दुर्लभों में सर्वोत्तम दुर्लभ, ऐश्वर्यवानों में सर्वोत्तम ऐश्वर्यमान, माधुर्यमानों में सर्वोत्तम परम मधुर ॥१६१॥

रम्यं रम्यात्परं यस्य काम्यं काम्यात्परं च है ॥
धर्म्यं धर्म्यात्परं सर्वं दीव्यं दीव्यात्परं तथा ॥१६२॥

रमण करने वालों में सर्वोत्तम रमणीय, कामना करने योग्यों में सर्वोत्तम कामना करने योग्य धर्मात्माओं में सर्वोत्तम धर्मात्मा, दिव्यों में दिव्यतर परात्पर दिव्य ॥१६२॥

रूपं रूपात्परं यस्य सुषमा सुषमा परा ॥
क्रीडाक्रीडा परायस्य लीलालीला परा पुनः ॥१६३

रूपवानों में परात्पर रूपवान, सुषमा में सुषमा वाले, खिलाड़ियों में परम खिलाड़ी, लीलाधारियों में परात्पर लीलाधारी ॥१६३॥

उत्साहादप्युत्साहोवै गानं गानात्परं-विदुः ॥
विनोदा दपि विनोदश्च स्वातंत्र्यं परमं विदुः ॥१६४॥

उत्साहियों में सर्वोत्तम उत्साही, गाने वालों में परात्पर गन्धर्व, विनोदियो में परात्पर विनोदी स्वतन्त्रों में परात्पर स्वतन्त्र ॥१६४॥

आधीनत्वाधिक तस्या धीनत्वं शोभनं परम् ॥
लज्जयाधिक लज्यात्वं प्रौढत्वं प्रौढ़ताधिकम् ॥१६५॥

अधीन रहने वालों में सबसे उत्तम अधीन—इस प्रकार श्रीरामजी का अधीन रहना अति परम शोभायमान है। लज्जावानों सर्वोत्तम लज्जावान, प्रौढ़ता में सर्वोत्तम प्रौढ़ ॥१६५॥

लावण्यादधिकं तस्मिल्लावण्यं चैव शोभनम् ॥
लालित्याधिक लालित्यं वाग्दृष्ट्यादिषु शोभनम् ॥१६६॥

लावण्यता में सर्वोत्तम लावण्य, ललितता में सर्वोत्तम अति शोभायमान ललित, वाणी और दृष्टि में भी अत्यन्त शोभायमान लालित्य भरा है ॥१६६॥

शाठ्यं धाष्ट्यं व दाक्षिण्य मानुकुल्यादिकं परम् ॥
रमणा त्वाधिकं तस्मिन्रमणत्वं विराजते ॥१६७॥

सठता, धृष्टता चतुरता, अनुकूलता आदिक रमणशीलों के गुणों में सर्वोत्तम रमणशील गुण वाले श्रीराम जी विराजते हैं ॥१६७॥

सच्चिदानन्दकत्वं यत्सच्चिदानन्दतः परम् ॥
आराध्याधिक माराध्यः फलाधिक फल प्रदः ॥१६८॥

सच्चिदानन्दों में परात्पर सच्चिदानन्द, आराध्य देवों में परात्पर आराध्य देव, फल देने वालों मे परात्पर फल दाता ॥१६८॥

दर्शनाधिक दर्शनं च प्राप्ति प्राप्तेः परापरा ॥
स्वीकारादपि स्वीकारो रसादपि रसाः पराः ॥१६९॥

दार्शनिकों में सर्वोत्तम दर्शन के योग्य, प्राप्यों में सर्वोत्तम पर अपर प्राप्य, स्वीकारों में परात्पर स्वीकारता, रसों मे परात्पर रसस्वरूप ॥१६९।

गूढाद्गूढाद्गूढ तमो वेद्याद्वेद्याच्च सत्तमः ॥
अखण्डादप्य खण्डोऽपि ज्ञेयाद्ज्ञेय तरः पुमाम् । १७०॥

गूढ़ों में गूढ़तम गूढ़, जानने योग्यों में परात्पर जानने योग्य, अखण्डों में परात्पर अखण्ड जानने योग्यों में परात्पर जानने योग्य उत्तम पुरुष ॥१७०॥

ध्येयाद्ध्येयाद्ध्येयतमः सेव्यात्सेव्यात्परोप्ययम् ॥
गाय मानो गाय मानै गौरवात्पर गौरवैः ।१७१॥

ध्येयों में परात्पर ध्येय, समस्त सेव्यों के सेव्य परात्पर ये श्रीरामजी हैं, सभी गाने वालों से गाने योग्य, गौरिवों में परात्पर गौरववान ॥१७१॥

वंद्यं वंद्य तमो वंद्यो योग्यो योग्यतमादपि ॥
स्वाद्य स्वाद्यतमः स्वाद्यो भव्यो भव्यतमादपि ।१७२
सागरो गुण रत्नानां श्रीरामो नृपसत्तमः ॥
गण्यां कत्त समर्थस्तु नशेषो न च भारती ॥१७३॥

वन्द्यों मे परात्पर वन्द्य, योग्यों में परात्पर योग्य, स्वाद्यों में परात्पर स्वाद्यतम, भव्यों में परात्पर भव्यतम, दिव्य गुण रूप रत्नों के समूह ये श्रीरामजी सब राजाओं में सर्वोत्तम परात्पर राजा हैं इनके गुणों की गणना करने में न तो शेष जी समर्थ हैं न सरस्वती समर्थ हैं ॥१७२-१७ ॥

प्रजा परिजनानां तु समत्वेन मनोहरः ॥
कृतज्ञत्वेन भृत्यानां वृद्धानां मरजादया ॥१७४॥

प्रजा और परिजनों मे समान रूप से सबके मनों को हरने वाले, सेवकोंकी सेवा को जानने में परम कृतज्ञ, मर्यादा में परम बृद्ध ॥१७४॥

विप्राणां मान तो दानात्पण्डितानां प्रशंसया ॥
कार्य्येषु योजितानां तु क्षमया रघुनन्दनः ॥१७५॥

ब्राह्मणों को मान दान से, पण्डितों को प्रशंसा से हर कार्यों को नियोजित करने की कुशलता श्रीरघुनन्दन जी में है ॥१७५॥

अनुज्ञाव हकत्वेन शीलेन गुरुणा तथा ॥
गुरूणां च मनोहारी मित्राणां मृदुभाषणैः ॥१७६॥

आज्ञा पालन से और शीलादिक सद्गुणों से गुरु वर्गों के मनों को चुराने वाले, मीठी बोली से मित्रों के मनों को चुराने वाले ॥१७६॥

श्रीरामो लघुभ्रातृणामक्रोधेन च शीक्षया ॥
मनोहरति सर्वेषा मौदार्य्य गुण भूषणः ॥१७७॥

क्षमा शीलता से तथा शिक्षा से अपने छोटे भाइयोंके मनोंको चुराने वाले इस प्रकार श्रीराम जी अपनी उदारता आदिक गुणोंके भूषणों से सब के मन को चुराने वाले हैं ॥१७७॥

राज्ञां विदेश संस्थाना मागतानां सुश्रूषया॥
अत्यादरेण तेषां च मनोहरति राघवः ॥१७८॥

विदेश से आये हुए राजाओंकी अत्यन्त आदर पूर्वक सेवा करने से सबके मनको राघव हर लेते हैं ॥१७८॥

चातूर्यस्य ज्ञातृत्वेन गुणज्ञत्वेन राघवः ॥
शिल्पिनां गुण वादानां मनोहरति सर्वदा ॥१७९॥

अपनी विद्वता गुणज्ञता और चतुराई से अपने २ गुणों और कलाओ के अभिमानी शिल्पियो के मन को श्रीराघव सर्वदा हरण करते हैं ॥१७९॥

अतिरूपा द्वैदग्धया च सौकुमार्य्य पराश्रयात् ॥
सुन्दरीणां मनोहारी पशूनां पालनादपि ॥१८०॥

अतिशय रूप से और विलास विदग्धता से तथा मुग्धता पूर्वक अधीनतासे और सुन्दर सुकुमारता से सुन्दरियो के मन को हरण कर लेते हैं, पालन करने से पशुओ के मन को हरण कर लेते हैं ॥१८०॥

रामस्य दीव्यद्गुण मौक्तिकानि –
मनीषया चैव सुवोधितानि ॥
स्नेहार्ति सूत्रे परि ग्रन्थितानि –
दधाति योधन्य तमोंहि लोके ॥१८१॥

जो कोई मन को जीतने वाला महात्मा श्रीरामजी के दिव्य गुणरूपी मुक्ताओ को अतिशय स्नेहरूपी रेशमी धागेमें पोह करके कण्ठमे धारण करते हैं वेही बुद्धिमान सन्त सर्वलोकमें धन्यहैं॥१८१॥

चत्वार एषां प्रथिता गुणैश्च–
पौत्राहिते लोक नृपाधिपस्य ॥
तत्रास्ति रामो गुणतोपि ज्येष्ठो–
यो दक्षिणां केतव शोभनाङ्गः ॥१८२॥

हे राजन् ! यद्यपि ये आपके चारो पौत्र इन सब गुणों से लोक में प्रसिद्ध हैं परन्तु उन चारों में भी ये चक्रवर्ति कुमार श्रीरामजी उम्र से भी गुण से भी सबमें ज्येष्ठ हैं ये जो आपके दक्षिण अङ्ग में अतिशय शोभायमान अङ्ग वाले बैठे हैं ॥१८२॥

श्रुत्वा श्रुत्वा पौत्र गुणान्नराधियः –
प्रेम्णः परां सोपि दशां च प्राप्तवान् ॥
धन्योसि धन्योसि वशिष्ठ उक्त–
वान्सभ्याश्च सर्वेहितथा प्रशंशिरे ॥१८३॥

राज राजेश्वर महाराज श्रीअजजी अपने पौत्र के दिव्य गुणों को सुनते २ प्रेम की परावशा को प्राप्त हो गये। इस प्रकार प्रेम विभोर हुए श्रीअज महाराज को आप धन्य हैं, धन्य हैं—ऐसा श्रीवसिष्ठजी ने कहा इसी प्रकार अन्य सभी सज्जनों ने भी प्रशंसा किया ॥१८३॥

स्तोत्रं यन्मुनिना चोक्तं श्रीरामस्य मनोहरम् ॥
गुणानामति दिव्यानां वशिष्टेन महात्मनः ॥१८४॥

श्रीवसिष्ठ जी ने श्रीरामजी का मनोहर स्तोत्र कहा है सो महात्मा श्रीवसिष्ठजी द्वारा कहा हुआ अतिशय दिव्य गुणों का पुञ्ज ॥१८४॥

मनोहरं तु नाम्ना पि यः पठेद्भावतो नरः ॥
न वाध्यते कदाचिद्वै मायकै र्दुर्जयैर्गुणैः ॥१८५॥

उस स्तोत्र का नाम "मनोहर स्तोत्र" है। जो मनुष्य भाव पूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करेगा उसको माया के दुर्जय गुण भी किसी प्रकार बाधा न पहुँचा सकेंगे ॥१८५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम · रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे
सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नामद्विपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५२॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति
कथनो नामद्वि पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५२॥

शिवोवाच--इत्थं प्रेमोत्सवे जाते श्रीराम वर जानकैः ॥
केवयं कश्च देशोयं विस्मृताश्चात्मनो गतिः ॥१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती! इस प्रकार श्रीरामजी के बरात के जाने पर रास्ते में यह महा प्रेममयी उत्सव उत्पन्न हुआ जिस उत्सव में सभी बराती लोग हम कौन हैं? कहां जारहे हैं? अपनी सारी स्थित को भूल गए ॥१॥

क्षणं सर्वे मुद्रिताक्षाः पुनश्चोन्मीलितेक्षणाः ॥
यथा तथ्यं ददृशुस्ते स्वात्मानं मार्ग वर्त्तिनम् ॥२॥

एक क्षण के लिए सभी बरातियों ने प्रेम विभोरता से मूर्छित होकर अपनी आँखों को बन्द कर लिया। थोड़ी देर मे आँख खुलने पर सभी बराती लोग जैसे पहले मार्ग में जारहे थे उसी तरह से जाते हुए प्रतीत हुए (बीच मे वह जो पितरों का लोक दीख पड़ा वह सारा दृश्य अदृश्य होगया) ॥२॥

सर्वे च विस्मिता देवि पृच्छन्ति च परस्परं ॥
त्वया दृष्टं मयैवैकं किं चरित्रं बभूवह ॥३॥

हे पार्वती! पूर्व स्थिति प्राप्त होने पर सभी बराती लोग चकित हो गये। एक दूसरे से पूछ रहे हैं कि यह स्वप्न केवल मैंने ही देखा है कि तुमने भी देखा है। क्या अद्भुत यह चरित्र हुआ ? अहो आश्चर्य है ॥३॥

पृच्छंत्येके कथंत्येके मार्गं गच्छन्ति हर्षिताः ॥
स्वप्न रूपं स्मरंत्येके मौनं मौनं पथं गताः ॥४॥

इस प्रकार कोई पूछते हुए कोई कहते हुए अत्यन्त हर्षित होकर स्वप्न सरीखा बार २ इस दृश्य को स्मरण करते हुए बहुत से लोग मौन ही मौन जैसे के तैसे रास्ते मे चले जारहे हैं ॥४॥

पठंत्येके पाठयन्ति शृन्वन्ति श्रावयन्ति च ॥
श्रीरामस्य गुणादीव्या वर्णिता मुनिना यथा ॥५॥

बहुत से इसी बात की कथा कहते हुए जारहे हैं बहुतसे सुनते हुए जारहे हैं बहुत से एक दूसरे को सुनाते हुए जारहे हैं। श्री वशिष्ठ जी ने जिस प्रकार श्रीराम जी के गुणों का वर्णन किया था उसको सुन समझ कर ॥५॥

वदन्त्येके वयंधन्याः येर्दृष्टः स्वात्मनः प्रभुः ॥
स्वर्गस्थोपि महाराजा किं शुभं स्यादतः परम् ॥६॥

एक दूसरे से हम धन्य हैं, हम धन्य हैं जो हम लोगों ने स्वर्ग मे गये हुए भी अपने स्वामी का इस प्रकार प्रत्यक्ष दर्शन किया। इससे बढ़ करके अब और क्या सुख हो सकता है ? ॥६॥

प्रेम्णा तु निर्भराः केचित् केपि केपितु विस्मिताः ॥
सनैः सनैः जना मार्गं चरन्ति शिथिलक्रमम् ॥७॥

कोई २ प्रेम में विभोर हुए हैं, कोई २ आश्चर्य चकित हुए हैं। इस प्रकार मार्ग मे अत्यन्त शिथिल गति से धीरे २ चल रहे हैं ॥७॥

निश्चितात्मा मुनिस्त्वेकः प्रभावज्ञो महात्मनाम् ॥
तथा मात्यः सुमन्तोपि चान्ये विस्मित मानसाः॥८॥

इस सारे दृश्य का ठीक २ निश्चय प्रभाव को महात्मा श्रीवसिष्ठ जी जानते हैं तथा सुमन्त्र जी भी जानते हैं और सब तो विस्मित मन होकर चल रहे हैं ॥८॥

अग्रमग्र ममात्यौ द्वौ नाम्ना विदग सन्नतौ ॥
शकटा नश्वाः सैरभा वृषभा भारवाहकाः ॥९॥

बरातियों के आगे २ विदग और सन्नत नाम के दो मन्त्री चल रहे हैं उनके साथ बैलगाड़ी तथा बोझा ढोने वाले घोड़े, खच्चर, बैल आदि चल रहे हैं ॥९॥

अक्षौहिणीनां शतैश्च दिनान्ते यत्र संस्थितिः ॥
प्राप्यते तत्र ह्यताभ्यां रोप्यन्ते वस्त्र शालकाः ॥१०॥

उन सबकी रक्षाके लिए सैकड़ों अक्षौहिणी सेनायें साथ चलरही हैं। एक दिन मे बरात जितना दूर चल सकती है उतनी दूरी मे पहले ही जाकर के ये दोनों मन्त्री लोग वस्त्रों के महलों को सबके लिए उचित रूप में स्थापित करते हैं ॥१०॥

सप्तैव च चतुर्द्वारा विशालाश्च गृहान्तराः ॥
दूरतो सप्त प्राकाराच्छत घ्नीनां च स्थापनम् ॥११॥

यह बरातियों के वस्त्रों का महल सात आवरण चार दिशा द्वार वाले भीतर मे बड़े २ महल जो बहुत दूर से सातो आवरण बहुत सुन्दर क्रम से दीख पड़ते हैं। प्रत्येक द्वार के फाटकों पर तोप मशीनगन स्थापित किये हैं ॥११॥

रक्षार्थं चैव वीराणां शूल शक्त्यसि धारिणाम् ॥
प्रत्यागारं यथा योग्यं सय्या मंच विधायिनाम्। १२

और इन सप्त वरण वाले महलो की रक्षा के लिये बाहरी भाग मे चारो तरफ वीरो को सूल शक्ति तलवार आदि आयुधो को अङ्ग मे कसे हुए फौज को नियुक्त किये हैं तथा प्रत्येक महलों के फाटकों पर पहरा पड़ा है। हर एक महल में यथा योग्य पर्यंक, कुर्सियां तथा और भी सभी सामान उचित रूप में विधान किये गये हैं ॥१२॥

गत्वा तु क्रीयते नित्यं कुशलाभ्यां ततः परम् ॥
आभ्यांनिर्दिष्ट मानेतु वस्त्रागारे समन्ततः ॥१३॥

बरात के जाने पर पहले से गये हुए चतुर लोग बरातियों को यथा योग्य स्थानोंको बता करके इस वस्त्रागारमें चारों तरफ सब बरातियों को ठहराया ॥१३॥

सर्व भोग समाकरे सेवकैश्चापि संयुते ॥
प्रविशन्ति जनाः सर्वे यथा योग्यं मुदामनाः ॥१४॥

हर एक महल सब प्रकार की भोग सामग्री और सेवकों से परिपूर्ण हैं जो बराती जन जिस उचित स्थान में प्रवेश किया वह सब सुपास पाकर के अति प्रसन्न मन हुआ ॥१४॥

तन्निवासे तु संप्राप्ते मार्गाद्रामे वरा कृतौ ॥
शतघ्नीनां गर्ज्जितैश्च दुन्दुभीनां विनादितैः ॥१५॥

बराती के मार्ग निवास में पहूँचने पर फाटकों पर तोप मशीन गनें छूटती हैं दुल्हा बेष में श्रीरामजी के सामने नृत्यगान मंगल कृत्य होते हैं। दुन्दुभी आदि के अनेक प्रकारके बाजे बजते हैं॥१५॥

हयानां च गजानां च घण्ट नादाभि गर्ज्जितैः ॥
कोलाहलै मनुष्याणां पूर्य्यते च दिशोदश ॥१६॥

घोड़ों की हाथियों की हिनहिनाहट और घन्टा आदिक बाजाओं की गर्जना तथा मनुष्यों के पारस्परिक भाषण से कोलाहल दशो दिशाओं को भर रहे हैं ॥१६॥

पुनर्दीपावलीभिश्च दीपौषध्या महावनं ॥
तथा विराजते शश्वत्त न्निवास मनोहरम् ॥१७॥

उसी प्रकार दीप वृक्षों की पंक्ति तथा दीप औषधि का महावन इसी प्रकार पक्षियों के द्वारा आकाश दीप इन सब सजावटों से वह मार्ग का निवास स्थान नित्य प्रति बड़ा ही सुन्दर मनोहर शोभित होता है ॥१७॥

मनुष्याः कौतुकं द्रष्टुं ग्राम्यास्तु कोटि कोटिशः ॥
पश्चाच्च पूर्वतश्चैव पार्श्वभ्यां च समंततः ॥१८॥

जहाँ भी पड़ाव टिके आस पास की ग्रामीण जनता दूर २ से कौतुक देखने के लिए करोड़ों की संख्या में भीड़ लगा करके पश्चिम, पूर्व, उत्तर, दक्षिण चारों तरफ से आती है ॥१८॥

आयान्ति सत्समाजैश्च गायन्तस्तु नटन्नटन् ॥
समुद्राभि मुखा नद्यस्तथा शोभां प्रपेदिरे ॥१६॥

वह ग्रामीण जन सुन्दर समाज बांध करके गान बजान नृत्य करते हुये श्रीरामजी की बरात को देखने के लिए आरहे हैं। जिस प्रकार सब नदियां समुद्रमें जाती हों उसी प्रकार चारों तरफ से जनता की भीड़ शोभा दे रही है॥१६॥

वाद्यानि वाद्यन्ति च यत्रतत्र वाराङ्गणा नृत्यन्ति यत्रतत्र।
विदूषकाः कौतुक मादधन्तो हसन्ति नृत्यन्ति च हासयन्त ॥२०॥

जहां तहां विविध प्रकार के बाजा बज रहे हैं, अप्सरायें नृत्य कर रही हैं विदूषक लोक अनेक प्रकार हास विलास नृत्य कौतुक करके सबको हँसा रहे हैं॥२०॥

महा सभा मध्य विराजित श्रीः –
विवाह वेषो रघुनन्दन श्रीः ॥
राज्ञां समाजैः परिषेवितः श्रीः –
सच्चामरैश्छत्र परिभ्रम च्छ्री ॥२१॥

इस प्रकार उस निवास स्थानके सातों आवरण महलों के बीच में महान सभा मण्डप के मध्य सभी देशों के राज समाज से छत्र चवरादिक द्वारा सेवित सुन्दर दुल्हा के भेष में वि वाह के उमङ्ग से शोभित श्रीरघुनन्दन जू को देख करके सभी लोग अति प्रसन्न हो रहे हैं ॥२१॥

यामैक शेषे समये रजन्याः पानानि भारै रथयोजयित्वा ॥
सैन्यैः समाजैश्च प्रदीप दीप्त्या मार्गं प्रवत्तौ प्रथमं तदेतौ॥२२॥

इस प्रकार रात्रि में निवास करके प्रातःकाल एक याम रात्रि के शेष रहने पर वे दोनों मन्त्री बरात की अगवानी में अपने साज समाज सेना के सहित दीप वृक्षों से प्रकाशित मार्ग से पहले ही चल देते हैं ॥२२॥

अथोदये चोशनः सः प्रभाते --
प्रमाण घट्यो घटिताच्च नादे ॥
महन्महा दुन्दुभि नादिते च –
जजागरुः सर्व जनानिवासे ॥२३॥

इधर सम्पूर्ण बराती प्रातःकाल अरुणोदय के समय ऊँचे नाद से बजे हुए दुन्दुभी द्वारा समय का निश्चय करके सब बराती लोग जगे।। अपने २ स्थानों में नित्य कर्म से निवृत्त होकर ॥२३॥

स्नात्वासुभूषां परिधाय चांगे समाजबद्धाश्च नृपाधिवासं ॥
गत्वा च गत्वा च मुनि प्रणम्य निरीक्ष्य रामं मुदमाययुस्ते।२४

स्नान करके भूषण वस्त्र अङ्गों में धारण करके अपने २ समाजों से बद्ध होकर राज निवास में आये मुख्य लोग महाराज श्रीवशिष्ठ जी को प्रणाम किए। दुल्हा वेष में श्रीरामजी को देखकर अतिशय प्रसन्न हुए ॥२४॥

Scanned by CamScanner

तथा सुमन्तं सचिवं महान्तं नत्वा तदाज्ञां परिलभ्य सर्वे ॥
आरुह्य सद्भूषित वाहनं च परीक्षयन्ते प्रतिहार दीक्षाम्॥ २५

उसके बाद प्रधान मन्त्री श्रीसुमन्त्र जी को प्रणाम किये उनकी आज्ञा पाकर अपनी २ सुन्दर भूषित सवारियों में बैठ करके चलने को तैयार हुए। प्रतिहारियों की प्रतीक्षा कर रहे हैं ॥२५॥

तदोच्च शब्दं प्रतिहारकाणां समाज बद्धा परिश्रुय सर्वे ॥
जयत्ययोध्याधिप राज राज इत्युद्गृणन्त स्तुक्रमेण चेरुः ॥२६॥

तब तक समाज बद्ध प्रति हारियों के श्री राज राजेश्वर महाराज श्रीअयोध्यापति जय हो"- इस प्रकार ऊँचे शब्दों को सुनकर सभी बराती लोग क्रमशः चलने लगे ॥२६॥

विचित्र भूषाङ्ग विराजित श्रीः श्रीराज राजेन्द्रकुमार रामः ॥
महोच्चमात्तंग विमान कस्थंः सुमेरु सानो विभमाति सूर्य्यः। २७

उस बरात के बीच में सुमेरु पर्वत के समान महान मतवाले ऊँचे हाथी की पीठ में विमानके ऊपर विचित्र वस्त्र भूषणों से सोभित श्री राज राजेन्द्र कुमार श्रीराम जी उसी तरह से सोभित हैं जिस तरह से सुमेरु पर्वत के शिखर पर सूर्य शोभित होते हैं ॥२७॥

देशाधिपत्यात्मज कोटिभिश्च परिस्कृताङ्गाति मनोहरैश्च ॥
परिवृतो राजति रामचन्द्रोरवि र्यथा लौकिक वाल खिल्यैः ।२८

श्री राम जी के हाथी के अगल बगल में सभी देश के करोड़ों राज कुमार सुन्दर सजावटों से सजे हुए मनोहर अङ्ग शोभित हो रहे हैं उन राज कुमारों के बीच में श्री राम जी वाल खिल्य ऋषियों के समाज के बीच में सूर्य की तरह से प्रतीत हो रहे हैं ॥२८॥

पश्चात्सुमन्तः सचिवाधि राजो राज्ञां समाजैः परि सेव्य मानः ॥
अग्रे वशिष्ठः मुखजानकस्थो महामुनीनां विलशत्समाजे ॥२९॥

श्रीरामजी की सवारी के पीछे प्रधान मन्त्री श्रीसुमन्त्र जी की सवारी देश २ के राजाओं की सवारियों से घिरी हुई है। सब राजा लोग श्रीसुमन्त्र जी की सेवा कर रहे हैं। श्रीरामजी की सवारी के आगे श्रीवसिष्ठ जी की सवारी बहुत से मुनियों के विशाल समाज के मध्य में श्रीवसिष्ठ जी की अद्भुत शोभा हो रही है ॥२९॥

ततो यमग्रंतु जनैः समस्त्र वाह्यं सुमंचं विसदं विशालम् ॥
तस्मिन्प्रनृत्यन्ति च वार मुख्यो वाद्यन्ति वाद्यानि मधुस्वराणि॥ ३०

श्रीवसिष्ठ जी की सवारी के आगे हजारों मनुष्यों के कन्धाओं पर एक बहुत विशाल सुन्दर मञ्च है उसमें अप्सराओं का नृत्य, मधुर स्वर से गान बजान हो रहा है ॥३०॥

नोच्चैर्वदे त्कोपि परस्परं च हया गजा नैव नदन्ति केचित् ॥
शृण्वन्ति सर्वेमधुरान्सुरागा न्विमोहितार्थैः पशवो मृगाश्च॥३१

बराती लोग परस्पर कोई ऊँचे स्वर से नहीं बोलते हैं। हाथी घोड़ा भी नहीं हिनहिनाते हैं क्योंकि सभी लोग सुन्दर मधुर रागोंके गीत को सुनते हुये पशु पक्षी सभी मोहित होरहे हैं ॥३१॥

ततः सुदूरं प्रलयाब्धि घोषं तिरस्कृता दुन्दुभयो नदन्ति ॥
ततः कि लोच्चैः प्रतिहार कारणां गिरोऽपि मूर्च्छन्ति दिशो दशैव ॥३२
सार्द्धं तथा ते रवि वंशजानां प्रोद्यद्गुणानामपि गायकार्ये ॥
तेषां गिरः सूच्चतराः सवीणाः कांस्यैः समंदिग्दश बृंहमाणाः ॥३३

इस तरह दूर चलने पर दशों दिशाओं को मूर्छित करने वाला. प्रलय के समुद्र को तिरस्कृत करते हुए दुन्दुभियों का नाद सुन पड़ने लगा और प्रतिहारियों के स्वागत के शब्द बहुत ऊँचे आवाज से सुन पड़ने लगे। और उनके साथ सूर्य वंशीय कुमारों के जो गायक उनके भी गीतों की आवाज तथा वीणा आदि तार के बाजा, कांसे के बाजा, हवा के बाजा इन सबसे मिश्रित बहुत ऊँचे संगीत के आवाज दशों दिशाओं को घेरती हुई सुन पड़ती है ॥३२-३३॥

शृन्वन्ति दूरात्सुखदा मनोज्ञा मार्गं न विदुश्च ते न ॥
इत्थं यथोत्साहवतां जनानां सुखस्य संख्यां कमयामि कुत्र ॥३४॥

इस प्रकार इन गीतों की आवाज को दूर से सुनते हुए मार्ग में चलने वालों को कुछ भी चलने का परिश्रम प्रतीत नहीं होता। महान् उत्साह में भरे हुए सभी बराती जनता असंख्य सुखों को पाकर मैं कौन हूँ ? कहाँ जारहा हूँ ? कहाँ पर हूँ:? इसको नहीं जान रहे हैं ॥३४॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषायां सुमा महेश्वर सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम चतुः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५४॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम चतुःपञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५४॥

यथा नांदिकेश्वरेण शुभ लग्न स्व पत्रिका ॥
विवाहोद्दिश्य पुत्रीणां लिखिता स्व करेणवै ॥१॥

जिस प्रकार नान्दिकेश्वर महाराज देवीज ने शुभ लग्न पत्रिका को अपनी कन्याओं के विवाह निमित्त अपने हाथ से लिख करके श्रीअयोध्या जी के लिए भेजा था ॥१॥

तथैवः कौशलेन्द्रेण तत्प्रीतिज्ञेन चात्मना ॥
स्वीकार पत्रिका प्रेम्णा दत्ता विप्र करे मुदा ॥२॥

उसी तरह से श्रीकोशलेन्द्र महाराज ने भी उनके प्रेम को जान करके अपने आत्म विरद गौरव से स्वीकार पत्रिका को भी अपने हाथ से लिख करके बड़ी प्रसन्नता से ब्राह्मण के हाथ भेजा ॥२॥

विप्रेण सचिवे नाथ सा पत्री उत्सव प्रदा ॥
देवीजस्य करे दत्ता गृहीत्वा मस्तके दधौ ॥३॥

उस महान् उत्सव को पैदा करने वाली पत्रिका को लेकर मन्त्री और ब्राह्मण अपने देश में गये महाराज देवीज जी के हाथ में दिया। राजा ने भी उस पत्रिका को मस्तक से लगाकर लिया ॥३॥

पुन राज्ञा सचिवेन वाचयित्वा च श्राविता ॥
श्रुत्वा राजा महा मोद माप्तवान्कथनाधिकम् ॥४॥

Scanned by CamScanner

उसके बाद मन्त्री जी ने उस पत्रिका को बाँच करके राजा को सुनाया। राजा भी सुनकर कहने से अधिक आनन्द को प्राप्त हुए ॥४॥

स्वयं पुरोधसा गत्वा वरोधे वाचिकं तथा ॥
राज्ञीभ्यः श्रावितं सर्वं ताश्च सर्वा मुदं ययुः ॥५॥

और अपने पुरोहित को साथ लेकर रनिवास में गये, सब रानियों को भी पत्र सुनाया सुनकर सभी रानियां अति आनन्द को प्राप्त हुईं ॥५॥

पुनः पुरोधसं पूज्य पुरस्थान्ब्राह्मणानपि ॥
गौरीं गणपतिं पूज्य नार्य्यो गानं च चक्रिरे ॥६॥

फिर गुरुदेव जी की पूजा की और बहुत से ब्राह्मणों की भी पूजा की तथा गौरी गणेश पूजन पूर्वक स्त्रियों के माङ्गलिक गीत होने लगे ॥६॥

अथ सर्वेषु कार्य्येषु विवाहोद्दिश्य वस्तुषु ॥
महा मात्येनोप मात्याः प्रेरिताये यथोचिताः ॥७॥

और भी विवाह के उद्देश्य बहुत से कर्म होने लगे। महामन्त्री जी ने अपने उपमन्त्रियों को यथोचित कार्यों में प्रेरणा करके ॥७।

पुरस्थाश्च नरनार्य्यो बाल वृद्धाः समन्ततः ॥
राजगृहे महोत्साहं श्रुत्वा हर्षेण ह्यागता ॥८॥

तथा और भी नौकर-चाकर, नर-नारी, बाल-वृद्ध सबको प्रेरणा करके विवाह के योग्य बहुत से कार्य राजमहल में होने लगे। सभी लोग इस उत्सव के समाचार को सुनकर महान् उत्साह और हर्ष से भर करके जहां तहां से राजमहल में आने लगे ॥८॥

पुरोधसं च सचिवा नयोध्यायाः समागतान् ॥
एकान्ते च समास्थाय प्रेम्णात्यन्त मुदान्विता ॥९॥

नगर की जनता प्रधान लोग सब इकट्ठा होकर के श्रीअयोध्या जी से आए हुए उपरोहित और मन्त्री जी को एकान्त में बैठा करके प्रेम से प्रसन्न होकर पूछने लगे ॥९॥

देवौजा देव तुल्यस्तु श्रीमद्दशरथस्य च ॥
स्वभावो वैभवश्चैव समाजश्च बलादिकम् ॥१०॥

देवताओं के समान प्रभावशाली महाराज देवौज जी इनके सम्बन्धी चक्रवर्ति महाराज दशरथ जी का स्वभाव, वैभव, समाज सेनादिक ॥१०॥

आपृच्छद्विधि वत्सर्वं तैश्चापि मुदितात्मभिः ॥
व्यासेन कथितुं सर्वैः सोद्युक्तं मानसं कृतम् ॥११॥

और भी बहुत सा प्रसङ्ग विधिवत सब लोग पूछने लगे। प्रसन्न होकर के पूछते हुए उन सबको उपरोहित जी ने विस्तार पूर्वक अयोध्याजी का सारा समाचार कहना आरम्भ किया सब नगरवासी भी सुनने के लिये सावधान मन होकर बैठे हैं ॥११॥

Scanned by CamScanner

पुरोधा उवाच—किं वर्णयामि महिपाल मणेर्महत्वं--
यस्या ज्ञयापरिसरेत्सुर लोक नाथः ॥
दिक्पालकाः करपुटं च विधाय चान्ये -
तिष्ठन्ति वदनं सुवि लोकयन्तः ॥१२॥

उपरोहित जी बोले कि चक्रवर्ति महाराज समस्त राज राजेश्वर के महत्व का मैं क्या वर्णन करूं ? जिनकी आज्ञा के लिये देव लोक का नायक इन्द्र भी तथा दिकपाल लोग भी हाथ जोड़ करके सामने खड़े रहते हैं तथा अन्य सभी लोकपाल लोग जिनके मुखचन्द्र को हाथ जोड़कर देखते रहते हैं ॥१२॥

अन्ये नृपाः शत सहस्र समूहताश्च--
तस्यांघ्रि सेवन रता विभवेषु वस्तु ॥
स बान्धवाः सतत यस्य हिते रताश्च --
स द्वै भवेन परि पूरित मोद युक्ताः ॥१३॥

और भी सैकड़ों हजारों राजा लोग जिनके चरण की सेवा में निरत होकर अपने को सुखो ऐश्वर्यमान होना चाहते हैं। अपने वन्धु वर्गों के साथ महाराज चक्रवर्ति जी के हित के लिए सुन्दर और वैभव से परिपूर्ण आनन्द युक्त होकर खड़े रहते हैं ॥१३॥

राज्येऽष्ट मंत्रिण उदार गुण प्रभावाः-
क्षेमं करा सकल शास्त्र विदाम्वराश्च ॥
मुख्योस्ति तेषु सकलेषु सुमन्तएक --
स्तस्याज्ञया सकल कार्य्यं विधायकास्ते।।१४॥

तथा प्रधान आठ मन्त्री बड़े उदार गुण प्रभाव वाले सब शास्त्रों को जानने वाले राज्य में सब प्रकार की कुशल को पैदा करने वाले महान् हैं उन सबमें प्रधान श्रीसुमन्त्र जी हैं जिनकी आज्ञा से सभ मन्त्री लोग हर प्रकार के कार्यों का विधान करते हैं ॥१४॥

वह्नेः प्रभाव मति नम्य सुवर्त्तमाना--
अर्क्क प्रताप मति नम्य सुवर्त्तकाश्च ॥
सैन्याधिपा अरि विदर्य्यकरा स्तु यस्य-
शास्त्रास्त्र वेद निपुणाः शुचि शील युक्ताः ॥१५॥

अग्नि के समान प्रभाव वाले अत्यन्त नम्रता पूर्वक वर्ताव करने वाले सूर्य के समान प्रतापवाले बड़े नम्र सुशील इसी प्रकार सेनापति जो शत्रुओं के हृदय को विदीर्ण करने वाले अस्त्र शस्त्र और शास्त्रों के जानने में अति निपुण परम पवित्र सुन्दर शील से युक्त हैं ॥१५॥

ये शस्त्रिणोप्यनुग वर्ग गताश्च यस्य-
सौन्दर्य्य शील गुण रत्न विभूषितास्ते ॥

Scanned by CamScanner

सम्बन्ध दोष मणु मात्र मसार वत्तां-
नो विन्दते पशुपुयस्य जनेषु किं स्यात् । १६ ॥

और जो सेना के सिपाही हैं अन्य वीर पहलवान अस्त्र शस्त्रों को धारण करने वाले हैं वे भी सब अति सुन्दर रूप, शील, गुण रत्नों से भूषित हैं जिनमें दोष असार का सम्बन्ध अणु मात्र भी नहीं है जिनके पशु पक्षी छोटे जन भी किसी प्रकार के दोष असार सम्बन्ध से रहित हैं ॥१६॥

किं वर्णयामि नृपतेः प्रति हार काये-
दीव्यां म्वराविविधि रत्न विभूषिताश्च ॥
तेषां नृपेषु कर दण्ड धृतेन भेद-
श्चान्यत्समं सरस रूप सुभाव कौस्तु ॥१७॥

ऐसे महाराज श्रीअवधेश जी का मैं क्या वर्णन करूं जिनके द्वार पर प्रतिहारी लोग विविध रत्न भूषित दिव्य भूषण वस्त्रों को धारण किए हुए उनमें और राजाओं में केवल हाथ में दण्ड लेने से भेद है और किसी भी सरस रूप स्वभाव गुण मे कोई भेद नहीं है । सब राजाओं के समान हैं ॥१७॥

यस्या पते जन पदे च' निवासिनो -
ये तेषां च सुरपतिः स्वयमीहमानम् ॥
ये सुव्रतातिशय लब्ध फलानगर्य्या-
राज्ञोव सन्ति कथ मुन्मित भोगभोग्याः॥१८॥

जिन अयोध्यापति महाराज के जनपद में निवास करने वाले उनकी स्पृहा देवलोक में इन्द्र भी स्वयं करता है जो सुन्दर व्रत वाले अतिशय सुन्दर फल को प्राप्त किये हुए श्रीअयोध्या नगर में निवास करते हैं उनके सामने अन्य देश के राजा लोग क्या विशेष भोगों को भोग सकते हैं ॥१८॥

दुर्गाणि दुर्गम तराणि महोच्चकानि-
पुर्य्याहि सप्त विलशन्त्यरि दर्प्प काणि ॥
शक्त्यासि शूल धर वीर वलोच्चकैश्च-
संरक्षितानि सततं गण वद्धकैश्च ॥१९॥

श्रीअयोध्या नगरके बाहरी भागमें नगर रक्षा वास्ते जो सात दुर्ग बने हुए हैं वे अत्यन्त दुर्गम और महान ऊँचे शत्रुओं के अभिमान को चूर करने वाले अतिशय शोभित हैं । उन दुर्गों में रक्षा करने वाले वीर शक्ति तलवार शूल आदि आयुधों को धारण किये हुये अत्यन्त बलवान हमेशा समाज बद्ध होकर के रक्षा करते हैं ॥१९॥

खातानि सप्त परितोप्यति निम्न कानि-
कूल द्वये ललित घट्ट विराजि तानि ॥
कंजानि यत्र विलशन्ति चतुर्विधानि -
क्रीडन्ति हंस जल कुक्कुट सारसाश्च ॥२०॥

सातों परकोटाओं के बीच २ सात खाई भी चारों तरफमें हैं जिनके किनारे मणिमय रचनाओं

Scanned by CamScanner

से युक्त घाट बने हुए प्रकाश कर रहे हैं। जल के बीच रङ्ग २ के चतुर्विध कमल खिले हुए हैं। हंस, जल कुक्कुट, सारसादि पक्षी उस जल में और किनारों पर विहार कर रहे हैं ॥२०॥

चत्वारि सन्ति विलशन्ति मुखानि पुर्य्याः-
सद्गोपुराणि वर तोरण संयुतानि ॥
चत्वार्य्य लौकिक विभांत्यपि पीठकानि ॥
सद्वै भवेन परि पूरित चित्र कानि ॥२१॥

श्रीअयोध्या नगर के सातों परकोटा चारों दिशाओं में चार राजमार्ग बने हुए हैं। परकोटाओं के चारों दिशाओं वाले फाटकों के ऊपर ऊँचे गोपुर बने हुए हैं। जिनमें ध्वजा, कलश, तोरणादि बहुत दूर से दीख रहे हैं। इन चारों दिशाओं के फाटकों से बाहर चार पैठ महान् ऐश्वर्य से परिपूर्ण चित्र विचित्र रङ्ग के महलों से सुन्दर बने हुए हैं ॥२१॥

पीठेषु तेषु क्रय विक्रय-जीवितो ये -
ग्यायान्तिवैश्रवण तुल्य धना महान्तः ॥
दीव्यत्समस्त मणि घोटक नाग जातं-
दूरान्न यन्ति परितों सुक दिव्य कान्तम् ॥२२॥

उस अयोध्या नगर के बाहर वाले चारों दिशा के पैठों में बेचने और खरीदने वाले बड़े २ महाधनिक लोग कुवेर के सदृश ऐश्वर्य को लेकर आते हैं, व्यापार करते हैं। हाथियों से उत्पन्न हुए गज मुक्तादि बहुत जाति की मणियां हाथो और घोड़ाओं पर लद करके दिव्य प्रकाशमय वस्त्रों से सजे हुए हाथी घोड़ाओं पर दूर से लाते हैं और ले जाते हैं ॥२२॥

नो भाषते विपण केतु जनाः कदाचिल्लाभाय चा नृतवचांनृपतेः प्रतिज्ञात्॥
•श्रीमत्समस्त विभवं परिवारितश्च ह्या गत्य पश्यति नृपो विपणं महद्धम्॥२३

बाजार में कोई भी मनुष्य अपने लाभ के लिए किसी प्रकार से भी असत्य नहीं बोलते हैं क्यों कि महाराज को प्रतिज्ञा से व्यापार का जो भाव बना हुआ है उसी अनुसार सब व्यापार करते हैं कभी कभी श्रीमान् महेन्द्र मुकुट महाराज भी अपने महान् ऐश्वय विभव से घिरे हुए उस पैठ में आते हैं। महान् बढ़ते हुए उस बाजार के व्यापार को देखते है ॥२३॥

पुर्य्यं तरं परम चित्र विचित्र कारै रष्टापदेन कृत भाग मतीव शोभम् ॥
हर्म्याणि हेमकलशै ध्वंज सूचितानि किं वर्णयामि भवनं भुवनेश्वरस्य ॥२४

श्री अयोध्या नगर के अन्दर परम चित्र विचित्र अष्ट कोणाकार आठ आवरण सारी फल की तरह से खण्ड २ विभाग बने हुए अत्यन्त शोभायमान नगर की शोभा को और नगर के महलों में छज्जे स्वर्ण कलश, ध्वजा इन सबकी शोभा को तो मैं क्या वर्णन करू जिस नगर के अधिपति समस्त ब्रह्माण्ड भर के अधिपति महाराज श्री दशरथ जी हैं उनके भवन को कौन कह सकता है ॥२४॥

नैतादृशी सुरपते र्नच विश्व धातु र्दृष्टा मयाकिल सभात्वज नन्दनस्य ॥
यत्रेन्द्र पाशियम वैश्रवणादयोपि बध्वां जलिं कृपण पेक्षण मादधानाः॥२५॥

Scanned by CamScanner

जिस प्रकार महाराज दशरथ की नगरी है इस तरह की नगरी तो न स्वर्ग में इन्द्र के पास है न ब्रह्माण्ड सृष्टिकर्ता ब्रह्मा जी के पास है जैसा कि श्रीअजनन्दन महाराज दशरथ जीका नगर मैंने देखा है जिन महाराज के सामने इन्द्र, वरुण, यम, कुबेरादि समस्त लोकपाल हाथ जोड़ करके दीन हीन होकर के महाराज की आज्ञा को चाहते रहते है ॥२५॥

श्रीराम नीरदवपुःस्तु वनैक वीरः कंदर्प्प कोटि सुषमाङ्ग विशाल नेत्रः ॥
कारुण्यशील सुवदप्रणयाति नम्रो विद्या विलाश निपुणः कृत विन्महात्मा॥२६

उन महाराज के कुमार श्रीरामजी नील मेघ के समान श्याम, चौदहों भुवन में एक बीर, करोड़ कामदेव की सुषमा युक्त अङ्ग वाले विशाल नेत्र, कारुणिक हृदय, सुन्दर सुशीलता पूर्वक बोलने वाले स्नेह प्रणय से नम्र स्वभाव वाले हर प्रकार की विद्याओं के विलासों में निपुण, दूसरे के किये उपकारों को खूब जानने वाले महात्मा है ॥२६॥

इत्थं विभाति भरतोऽनुज एव तस्य श्रीलक्ष्मणो ललित गौर वपुर्गुणज्ञः॥
तस्यानुजस्तु रिपुसूदन काञ्चनाभः शीलातिशील सरलः प्रतिबीर हीनः॥२७

इसी प्रकार उनके छोटे भाई श्रीभरत जो और ललित गौर वर्ण वाले बड़े गुणज्ञ श्रीलक्ष्मणजी उनके भी छोटे भाई स्वर्ण के समान प्रकाशमान अङ्ग वाले श्रीशत्रुघ्न जी ये सबके सब अति शीलवानों में भी अधिक शीलवान सरल स्वभाव वाले अपने सदृश पराक्रमी बीरों से हीन अद्भुत है ॥२७॥

चत्वार एव नृप कौशल पालकस्य लोकोत्तरायत गुणाः सुखदाः सुपुत्राः ॥
स्नेहार्ज्जवांतर परस्पर लग्न चित्तानित्यानुगत्व मतय स्त्र य एवजेष्ठे ॥२८।

ये चारों कुमार महाराज अवधेश जी के जैसे उत्तम गुणवान है सबको सुख देने वाले है ऐसे पुत्र लोक में किसी के नहीं है परस्पर अत्यन्त स्नेह रखने वाले सरल स्वभाव के यद्यपि चारों भाई है तो भी तीन भाई परस्पर एक चित्त वाले नित्य अपने ज्येष्ठ भ्राता श्रीरामजी में अपने छोटे भाईपने का भाव बराबर निर्बाह करते है ॥२८॥

पत्नी गणास्तु नृपते नृप सेवितांघ्रेः सम्बन्धिन स्तत्र बहु शुचि शीलयुक्ताः॥
तिस्त्रस्तु तत्र गुण रूप विशेष मान्यास्तत्रापि रामजननी कुल कीर्तिरूपा॥२६

इसी प्रकार महाराज श्रीदशरथ जी की स्त्रीगण यद्यपि सभी राज राजेश्वर महाराजके चरणों की सेवा करने वाली है तो भी उन सबमें तीन विशेष रूप गुण वाली महाराज की आदरणीय है उन तीनों में भी श्रीरामजी की माता तो सूर्यकुल की कीर्ति स्वरूपा ही है। इस प्रकार के महाराज अवधेश बड़े पवित्र शील वाले सब राजाओं से सेवित चरण वाले आप सबके सम्बन्धी होवेंगे ॥२६॥

रामस्य सुन्दर बधू र्जनकात्मजासीत्तस्याः प्रभाव मतुलं किमुवर्णयामि ॥
गन्धर्ब नाग सुर किन्नर राजपुत्र्यः सापत्न्यकं परिविहाय नयन्ति सौख्यम् ३०

उन श्री महाराज दशरथ जी के बेटा श्रीरामजी की पत्नी श्रीजनकात्मजा जी बहुत ही सुन्दर है उनका प्रभाव भी अतुल है, गन्धर्व, नाग, देवता, राजाओं की कन्यायें सब उन श्री जनकात्मजा जी की सौत भाव को मिटा करके सेवा भाव से नित्य सुख देती हैं उन श्रीजनकात्मजा जी का मैं क्या वर्णन कर सकता हूं ॥३०॥

Scanned by CamScanner

यो योग भोग सम वात्तत शुद्ध कीर्ति मान्यः सतां सतत शाश्वत रूपनिष्ठः॥
तस्यात्मजानिजजनेषु कृपाल चित्तासौशील्य सन्ति हृदया बिनयाति युक्ता॥३१

जो महाराज श्रीमिथिलेस जी योग के अन्दर प्रवेश करके भोग का व्यवहार करते हैं इस प्रकार सन्तों में मान्य सुन्दर जिनकी कीर्ति हैं। सनातन परात्पर ब्रह्म के रूप में निष्ठा वाले उन मिथिलेस महाराज की कन्या श्रीसीता जी हैं जो अपने आश्रित जनों पर अत्यन्त कृपालु चित्त वाली सौशील्य वात्सल्य आदि सद्गुणों से भरी शान्त हृदय वाली बड़ी कोमल स्वभाव की है ॥३१॥

पौरास्त्रियश्च पुरुषाश्च बिशाल रूपा –
दिव्याम्बरा कनक रत्न बिभूषिताङ्गाः॥
धर्मार्थ काम परि पूर्ण सुधर्म निष्ठा –
बिज्ञान धाम हरि भक्ति युताः समस्ताः॥३२॥

इसी प्रकार श्रीअयोध्या नगर के स्त्री पुरुष महान् सुन्दर रूप दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित अङ्ग वाले धर्म, अर्थ, कामसे परिपूर्ण सुन्दर धर्ममें निष्ठावान विज्ञान के तो धाम ही हैं और सभी जनता भगवद् भक्ति से परिपूर्ण हैं ॥३२॥

चक्राधिपे दशरथे परिपूर्ण भावास्तेषां–
तथैव नृपतेः सुत एव दृष्टिः॥
इत्थं परस्पर गतिं नृपते जनानां –
किं बर्णयामिं नृपतेः क्रियया यथैव ॥३३॥

चक्रवर्ति महाराज दशरथजीमें पूर्ण भाव रखने वाले उस जनता पर महाराज की भी दृष्टि अपने पुत्रों के समान ही है इस प्रकार महाराज और जनता की परस्पर भावना और परस्पर सौहार्दमय क्रियायें इसका मैं क्या वर्णन करूं ? ॥३३॥

नीचोत्तमासु शुचि धर्म प्रजा सुराज्ञः –
प्रीतिः समानि च विभक्ति रथाति हीने॥
श्रीराम सांद्रघने चातक बर्हिणस्ते –
श्रीरामचन्द्र मसितेपि चकोरका श्च ॥३४॥

नगर की जनता सभी ऊँच नीच जाति के पवित्र आचरण वाले हैं इस प्रकार की धर्मात्मा जनता में महाराजकी भी महान प्रीति है। ऊँच नीच सबको सब प्रकार समान रूपसे महाराज व्यवहार करते हैं और उन जनता की भी महाराज कुमार श्रीरामजी में चातक की तरह से दृष्टि नील मेघ को देख कर के मोर की तरह से श्याम सुन्दर श्रीराम जी को देखकरके जनता नृत्य करती हैं और चकोर की तरह से दर्शन करते हैं ॥३४॥

उद्वाह मंगल महोत्सव आसुयद्वै –
तच्चिंतनं नृपपतेनं च यस्य कार्य्यम्॥
नाहूत कोपि गृहमेत्य नृपः कृपालुः –
कार्य्यं करोति सततं सुखदः प्रजानाम् ॥३५।

Scanned by CamScanner

प्रजा जनता को सतत सुख देने वाले परम कृपालु महाराज के घर में मङ्गल उत्सव कार्य होने पर भी महाराज को कुछ भी चिन्ता न होकर के अन्य किसी को कार्यों में विशेष न बुलाकरके स्वयं इस को करने लगे ॥३५॥

कोशादि रक्षक जना भुवनेशतुर्ये –
सद्व्रता नृप हिता अपि नीति युक्ताः ॥
आमन्यते नृप गृहं गृहमात्म नस्तैः –
कार्य्याधिकं वसु नरांत्यपि राज दत्तम् ॥३६॥

परन्तु सम्पूर्ण भुवन के एक ईश्वर महाराज दशरथ जी के कोषादि रक्षक जितने भी सेवक हैं वे सब सुन्दर व्रत वाले, सुन्दर नीति युक्त महाराज का हित करने में सावधान हैं। महाराज के घर को अपना घर सरीखा मान करके सभी लोग अपने २ कार्य में स्वयं लग जाते हैं। यद्यपि कार्य बहुत ज्यादा हैं धनादिक का खर्च बहुत ज्यादा है। सब लोग अपना सरीखा कार्य अपने और महाराज के धन में कुछ भेद न रखकरके कार्य करते हैं ॥३६॥

अत्युत्तमा नृप कुले कुशला स्वधात्री –
शोभाधिकाति सरयू सरितां वरां च ॥
तस्यां निमज्य नृपति गुरुणा प्रयुक्तो --
दानं करोति बहुल परिपूज्य विप्रान् ॥३७॥

महाराज श्री अवधेश जी के अति उत्तम कुल में सब प्रकार की कुशल का विधान करने वाली अत्यन्त शोभा सम्पन्ना श्री अयोध्या नगरी के चारों तरफ सब नदियों में श्रेष्ठ श्री सरजू जी की धारा बहती है। महाराज श्री चक्रवर्ति जी अपने गुरु श्री वसिष्ठ जी के सहित उन श्रीसरजू जी में स्नान करके ब्राह्मणोंका सम्यक्र प्रकार पूजन करके बहुत दान देते हैं ॥३७॥

संध्या त्रयं विबुध विप्र गुरूंश्च –
पूर्वान्संपूजये च्छ्रुति विधान गुरूपदीष्टः॥
आगन्तु भिक्षुक जनै मुनि विप्र वृन्दै–
रश्नाति नित्य नृपतिः सुरस प्रकारम् ॥३८॥

और गुरू महाराज के उपदेश से तीनों काल में संध्या, देवता, ब्राह्मणों का पूजन, सुन्दर पवित्र विधान पूर्वक आदि अन्त में गुरु महाराज का पूजन तथा आगन्तुक भिक्षुकों को और मुनि ब्राह्मण समूहों को सुन्दर रसीले बहु प्रकार पदार्थों से नित्य भोजन कराते हैं ॥३८॥

दीनान्धनैः क्षुधितकान्परि भोजनेन --
सीते न पीडित जनानपि वस्त्र दानैः ॥
विद्या चतुर्दश विराजित पूर्ण बोधो--
विद्या वतां गुण वतां कृत सादरोऽपि ॥३९॥

गरीबों को धन से भूखे लोगों को भोजन से, ठन्डी से पीड़ित जनों को वस्त्रों से दान सन्मान

देकर प्रसन्न करते हैं। चौदहों विद्याओं का पूर्ण बोध रखने वाले विद्यावान गुणवान सज्जनों में पूर्ण आदरणीय सबका आदर करने वाले महाराज प्रकाशित रहते हैं ॥३९॥

दूरान्मणीन्द्र कलशध्वज लचितैश्च-
दुर्गैं तराप्तसदनैः परितः प्रपूर्णा ॥
रत्नाकरः किमुसुरत्न समस्त साक्षा-
न्कत्वे व कौशल पुरी महती सुदृष्टा ॥४०॥

दूरसे उत्तम मणियों के कलशध्वजादिकों द्वारा दीख पड़ने वाली सातों आवरण दुर्गों से प्रत्येक आवरण में महलों चारों तरफ से परिपूर्ण श्री अयोध्या नगरी उत्तम समस्त सुन्दर रत्नों से परिपूर्ण क्या साक्षात् रत्नाकर समुद्र है ? अथवा महान् पुरियों की ईश्वरी समस्त देखने वालों की दृष्टि में साक्षात् ब्रह्मा जी के लोक सदृश लगती है ॥४०॥

पूर्वं प्रविश्य नगरीं तु विचार्य्य कार्य्यं-
यानै र्जनैश्च, परि संकुल राज मार्गाम् ॥
गेहं गुरोर्महिप मौलि मणेश्च गत्वा ॥
सं पर्च्चितो मुनि वरः स उदार तेजाः ॥४१॥

मैं जब यहाँ से पत्रिका लेकर श्री अयोध्या जी में गया तो पहले तो नगर में प्रवेश किया। रथ पालकी आदिक सवारियों से तथा पैदल जनता से भरी हुई नगर के राजमार्ग से चलते हुए अपने कार्य को विचार करके पहले तो मैं महिपाल मौलिमणि महाराज दशरथ जी के गुरु महाराज के घर में गया और उदार तेजस्वी मुनिवर श्री वसिष्ठ जी से परिचय किया। ॥४१॥

दृष्ट्वा नतं तु भवतः सचिवं च मां च-
मुत्थाय तेन मुनिना परि रंभिता च।
दत्वासनं कुशल मस्ति मुनिस्त्ववोच-
त्सर्वं मयापि कथितं समयं सुलब्ध्वा ॥४२॥

श्री वसिष्ठ जी का दर्शन करके प्रणाम किया। आपके मंत्री के सहित मेरे को देख करके श्री वसिष्ठ जी ने उठाकरके गले से लगाया उसके बाद आसन दिया; कुशल पूछे और मैंने भी मुनि महाराज को सब समाचार समय पाकर के सुनाया ॥४२॥

अस्माभिरेव मुनिराज नृपतेः सभायां -
गत्वा समस्त मुचितं कृतवा न्सुकार्य्यम् ॥
किं वर्णयामि तव भाग्य महादयंय-
त्सम्बन्ध एषकुल कीर्त्तिकरः प्रलब्धः ॥४३॥

हम लोगों के सहित मुनिराज श्री वसिष्ठ जी महाराज श्री दशरथ जी की सभा में गए। समस्त उचित कार्यों को श्री वसिष्ठ जी ने स्वयं किया। हे राजन आपके भाग्य के महान् उदय को मैं क्या वर्णन करूँ जो आपका यह श्री अवधेश महाराज से सम्बन्ध हो रहा है यह सम्बन्ध आपके कुल की महान कीर्ति को बढ़ाने वाला प्राप्त हुआ है ॥४३॥

Scanned by CamScanner

किं विर्णयामि नृपतेहि कुमारिकानां --
भाग्यं तपोव्रत यमैः कृत संचितं यत् ॥
राज्ञां किरीट कलशाङ्कित पादपीठ --
स्तस्यात्मजो रघुवरो वर आसु लब्धः ॥४४॥

हे राजन् ? आपकी इन कुमारियों के तपस्या व्रत यम नियम द्वारा उत्पन्न हुए पुण्य के सञ्चय से पैदा हुए भाग्य का मैं क्या वर्णन करूँ ? जिनके पति राजाओं के मुकुट के मणियों से चिन्हित है चरण के जूते जिनके उन महाराज चक्रवर्ति जी के प्रधान पुत्र श्री रघुनाथ जी दुल्हा प्राप्त हो रहे हैं ॥४४॥

शिवोवाच-इत्येवं गुण गौरवं गुणनिधेस्तेजः प्रतापायतं-
सौख्यं वैभवदान धर्म्म विहितं, भृत्येषु कारुण्यकम् ॥
देवौजा दशदिक्पतेश्च परितः श्रुत्वातु सम्बन्धिनो--
सानन्दं परमं ययौ स्वहृदये प्रेमाश्रु नेत्राच्छ्रुवन् ।४५॥

श्री शंकर जी बोले कि उपरोहित की इस प्रकार की गुणगौरव से भरी हुई बातों को महाराज श्री देवौज जी ने और उनकी सम्बन्धी जनता ने चारों तरफ से जब सुना तो गुणों के समुद्र तेज और प्रताप के निवास स्थान, सुख और वैभव के घर, दान और धम से पूर्ण, सेवकों पर करुणा करने वाले दशों दिशाओं के एक पति महाराज श्री दशरथ जी महाराज श्री देवौज जी के सम्बन्धो होवगे इस बात पर सभी लोग महान् आनन्दित होकर के अपने नेत्रों से प्रेम की धारा को बहाने लगे ॥४५॥

एतादृशं तं कथमर्च्चयामि प्रक्षीण वित्तो महतां महान्तम्॥
इत्येक शङ्का हृदये ममैव राजेति वार्त्ता हृदये चकार॥४६

इस प्राकर के महानोंमें भी महान् उन महाराज चक्रवर्ति दशरथ जी की अल्पधन वाला मैं कैसे सम्यक् प्रकार ठीक रूप से पूजा कर सकूँगा इस तरह की शंका से ग्रसित हृदय वाले राजा उपरोहित की बातों को सुने ॥४६॥

एतत्काले महादेवि चन्द्रेण प्रेषितः स्वयम् ॥
छद्मना स नृप द्वारं विप्र रूपेण चा गतः ॥४७॥

शङ्कर जी बोले-हे पार्वती ? इसी समय स्वयं चन्द्रमा से भेजा हुआ ब्राह्मण के रूप में छिपा हुआ दूत देवौज जी के दरवाजे पर आ पहुँचा ॥४७॥

निवेदयेति राज्ञे मां प्रतिहारं बभाष सः ॥
तदानु प्रति हारोऽपि ज्ञात्वा कंचिन्मुनिं परम् ॥
अंतः पुरं प्रविश्याथ श्रावयामास वाचिकम् ॥४८॥

दूत ने द्वारपाल से कहा कि मेरे को महाराज के प्रति निवेदन कर दो, ऐसा कहा । द्वारपाल ने भी यह कोइ मुनि है ऐसा जानकर अंतः पुर में प्रवेश करके महाराज को जनाए ॥४८॥

Scanned by CamScanner

श्रुत्वा शीघ्रं समाहूतो राज्ञापि संनिधिं मुनिः ॥
अर्घ पाद्यादिकं कृत्वा पूजयामास भावतः ॥४६॥

राजा ने सुनकरके मुनि को शीघ्र अपने समीप बुलवाया। अर्घ्य पाद्यादिक भाव पूर्वक पूजा करके ॥४६॥

कारयित्वा भोजन श्च संस्थाप्य पुनरासने ॥
तं प्रसन्न मुखं दृष्ट्वा बध्वाञ्जलि मुवाच सः ।५०॥

भोजन कराया फिर आसन पर बैठाकरके प्रसन्न मुख उन ऋषि जी को देखकर हाथ जोड़कर राजा बोले ॥५०॥

राजोवाच-अकारणं सतां नाथ गृहस्थान्बद्ध चेतसः ॥
स्वनुग्राहयितुं नित्यं लोके पर्य्यटनं शुभम् ॥५१॥

हे नाथ ? सन्तों का हम गृहस्थी में बँधे हुए चित्त वाले गृहस्थों के घर में जीव पर अनुग्रह करते हुए लोक में पर्यटन करने वाले महात्माओं का अकारण आ जाना महान् कल्याण कारक है ॥५१॥

तत्र वै नोचिता प्रच्छा कारणो द्दिश्य चागमे ॥
मादृशे नुग्रहायाथ भवतां भुवि संसरः ॥५२॥

ऐसी अवस्था में आपके आने का कारण क्या है ऐसा पूछना शास्त्रों की दृष्टि से उचित नहीं है क्यों कि आप महान् पुरुषों का पृथ्वी में विचरना मेरे सरीखे बद्धचित्त वालों के ऊपर अनुग्रह करना ही है ॥५२॥

मुनिरुवाच-कथं नो वदसीष्ये वं केवलं श्रुति पद्धतौ ॥
ईश्वरांशः प्रवर्त्यर्थं प्राणिनां हि नृपो भवेत् ॥५३॥

मुनि महाराज बोले कि ईश्वर के अंश जो राजा लोग हैं वे प्राणियों को प्रवृत्ति मार्ग में केवल वेद पद्धति से चलाकर अर्थ प्रदान करने वाले होते हैं तो आप ऐसा क्यों न कहैं ॥५३॥

परन्तु श्रूयतां राजन्यदर्थ मागतोष्यहम् ॥
गुरुणा प्रेषितो गेहं गुप्तं ते ज्ञापितुं धनम् ॥५४॥

परन्तु हे राजन् मैं जिसलिए आया हूँ उसको सुनिए। मेरे गुरु महाराज ने तुम्हारे घर में छिपे हुए धन को बताने के लिए मुझे भेजा है ॥५४॥

गुरुणा ते गर्त्तके च निहितं पूर्व मेवहि ॥
तदहं दर्शयाम्यद्य सुतानां कार्य्यहेतवे ॥५५॥

तुम्हारे पूर्वजों ने प्राचीन काल में बहुत सा धन गड्ढे में छिपाकर रक्खा है उस धन को मैं इस समय आपको कन्याओं के विवाह खर्च के वास्ते दिखाने के लिए आया हूँ ॥५५॥

वित्तव्ययोयाच केषु कौशलेशस्य नित्यशः ॥
तावद्वित्तं कुबेरस्य भवने नास्ति सर्वशः ॥५६॥

महाराज श्रीकौशलेश जीके याचकों में नित्य खर्च होने वाला जितना धन है कुबेर के सम्पूर्ण भवन में भी नहीं है ॥५६॥

Scanned by CamScanner

तेन सम्बन्ध मासाद्य कथं कारं करिष्यसि ॥
याद्दशं दैवतं देव ताद्दशं तस्य पूजनम् ॥५७॥

उन अवधेश महाराज से सम्बन्ध प्राप्त करके अब आप कैसे कार्य कर सकेंगे ! जिस प्रकार के देवता होते हैं उसी प्रकार की उनकी पूजा भी होनी चाहिये ॥५७॥

दानोत्सव स्तु पुत्रीणां विशेषे संपदा गुणैः ॥
भाग्येन लभ्यते किं च शोभते बहुभि र्धनैः ॥५८॥

पुत्रियों के विवाह में तो विशेष कर सम्पत्ति रूप गुण से ही दान उत्सव होता है परन्तु इस प्रकार के धन से शोभित हुआ दान उत्सव ऐसे सम्बन्ध में बड़े भाग्य से प्राप्त होता है ॥५८॥

तत्सिद्धये हि नृपते प्रसन्न मनसा त्वपि ॥
प्रेषितोस्मीह गुरुणा तेन चिन्तां परित्यज ॥५९॥

उसी बात की सिद्धि के लिये हे राजन् मेरे गुरु महाराज तुम्हारे में प्रसन्न होकर के मुझे यहां आपके पास भेजे हैं इस लिए अब आप इस धन विषयक चिन्ता को त्याग दीजिये ॥५९॥

राजोवाच--इत्येवं चिंतयन्तं मां प्राप्तोसि शुभ दर्शन॥
एतत्कौतुक मासाद्य कथं चिन्तां करोम्यहम् ॥६०॥

राजा देवौज बोले कि हे सुन्दर दर्शन मुनि महाराज मैं इसी बातकी चिन्ता मनमें कर रहा था सो यह आपका सुन्दर दर्श प्राप्त हो गया। इस प्रकार के कौतुक करने वाले आपको प्राप्त करके अब मैं किस लिये चिन्ता करूंगा ? ॥६०॥

परन्तु भवतां यो वै गुरुः सिद्धिभि रर्चितः ॥
जिज्ञासा मेत त्स्वरूपे तं मां बोधितु मर्हसि ॥६१॥

परन्तु आपके जो गुरू महाराज इस प्रकार की सिद्ध से पूजित हैं उनके स्वरूप को जानने की मेरी जिज्ञासा है सो आप मुझे बतावें ॥६१॥

शिवोवाच–एवं श्रुत्वा वचोराज्ञो गोपयन्कैतवो मुनिः॥
आग्र्यस्य स्वात्मनो रूपं श्लेष्यकर्णे ह्यु वाचसः॥६२॥

श्री शङ्कर जी बोले वह छिपा हुआ मुनि रूप चन्द्रमा का दूत राजा की बात इस प्रकार सुन करके अपना परिचय छिपाता हुआ अपने स्वामी चन्द्रमा के स्वरूप के गुणों का आश्लेषण करके बोला ॥६२॥

मुनिरुवाच-जानंतिस्म पूर्वजा स्ते तापसं चिरजीविनम्॥
जगद्दीपं तापहरं गुरुं मे हि नराधिप ॥६३॥

कि हे राजन् ? मेरे चिरंजीवी तपस्वी गुरू महाराज को तुम्हारे सब पूर्वज जानते हैं क्यों कि मेरे गुरू महाराज संसार के पाप को हरण करने वाले जगत के दीपक स्वरूप हैं ॥६३॥

वनेशजं मोक्ष पूरं शीलं शान्ति प्रदं परम् ॥
मृगचर्मा कं दधं तंनौमि नित्यं गुरुं स्वयम् ॥६४॥

Scanned by CamScanner

वन (जल, जंगल) के ईश्वर से पैदा हुआ मोक्ष को पूर्ण करने वाले शील और परम शान्ति को देने वाले मृग के चर्म को अङ्क में धारण करनेवाले ऐसे अपने श्रीगुरुजी को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ ॥६४॥

शिवोवाच-एवमुक्त्वा तु राजनं दर्शयामास कौतुकम् ॥
भूम्यन्तरालमाविश्य नृपेण सहवै मुनिः ॥६५॥

श्रीशङ्करजी बोले कि इस प्रकार राजा को कह करके भूमि के अन्दर विवर में राजा के सहित वह मुनि प्रवेश करके एक अद्भुत कौतुक को दिखाया ॥६५॥

सकाशाल्लब्धवा नेषः पूर्वं तेहि पितामहः ॥
चन्द्रमसो वैभवस्तु पालयामो नियोजिताः ॥६६॥

प्राचीन समय में इस धन वैभव को तुम्हारे दादा ने चन्द्रमा से प्राप्त किया था सो हमको इस धन की रक्षाके लिये इस स्थान पर नियोजित किया गया है ॥६६॥

हस्ताञ्जलि पुटं वध्वा तत्र भूम्यन्तरालकाः ॥
विनीता नृपतिं देवि समूचुश्च समाहिताः ॥६७॥

इस प्रकार हे देवि ! उस पृथ्वी के अन्दर गुफा में रहने वाले सम्पत्ति के रक्षक नौकरों ने बड़ी नम्रता पूर्वक हाथ जोड़ करके सावधानता से राजा को प्रार्थना की ॥६७॥

भवनान्तर मानीयदर्शयामासु रद्भुतम् ॥
पृथक् पृथक् समस्तं च राज्ञे च मुनये च वै ॥६८॥

इसके बाद वे सब गुफा के अन्दर रहने वाले सेवक उस मुनि के सहित राजा को एक घर से दूसरे घर में ले जाकर के समस्त अद्भुत वैभव को अलग २ स्थानों में महाराज के लिए दिखाया ॥६८॥

हयेभरथ रत्नानां बिस्तरोपचयाय च ॥
कोशेषु कौशलेन्द्रस्य भविष्यं यच्च भास्वरम् ॥६९॥

कहीं पर घोड़े, कहीं पर हाथी तथा इसी प्रकार रथ रत्न सुवर्ण आदि सामग्रियों को सब दिखाया जो भविष्य में महाराज कोसलेन्द्र जी के खजाना में प्रकाश करेगा वह सब धनको दिखाया ॥६९॥

पूर्णेन्दुना समस्याथवीजं देवौजसः परम् ॥
यश सो नृपते नित्यं भोग्यं रामस्य तच्छृणु ॥७०॥

अब पूर्ण चन्द्रमा के समान महाराज देवौजस के परम यश का बीज श्रीरामजी का नित्य भोग्य उस सम्पत्ति का हम वर्णन करते हैं उसको सुनो ॥७०॥

यं नैव पूरयेत्प्राविड् यं निदाघो न शोषयेत् ॥
इत्थं रामः स्वयं पूर्णः समुद्र इव सम्पदा ॥७१॥

जिस समुद्र को वर्षा ऋतु पूर्ण नहीं कर सकती है, ग्रीष्म ऋतु सुखा नहीं सकता है, स्वयं पूर्ण हुए उस समुद्र के समान इस प्रकार अपनी सम्पत्ति से श्रीरामजी स्वयं पूर्ण हैं ॥७१॥

Scanned by CamScanner

तथा पीय भावुकैस्तु भाविदत्तम् च भास्वरम् ॥
तद्वि दीनो रत्न मिव गृह्णाति रघुनन्दनः॥७२॥

तो भी भावुकों के द्वारा भाव पूर्वक दिया हुआ थोड़े से प्रकाशमान धन को जैसे कोई गरीब पारसमणि को पाकर खुश होता है इस तरह से श्रीरामजी उस धन को स्वीकार करते हैं ॥७२॥

एवं गुणास्तु श्रीरामे नान्यस्मिन् गिरजे स्वतः ॥
तेतु दाशरथे रंघ्रौ मनो मे भ्रमरायते ॥७३॥

हे गिरजे ! इस प्रकार के गुण श्री राम जी में ही हैं अन्य किसी में नहीं हैं मेरा मन श्री दशरथ नन्दन श्री राम जी के चरण कमलों में भौंरे की तरह से लटर पटर (अथपथ) रहता है। ७३॥

अथा गारे तु प्रथमे योजनान्ते सुविस्तरे ॥
हया काम्बोज वाह्लीका वनायुजाः समन्ततः ॥७४॥

हे पार्वती ? वे मुनि के साथ राजा उस गुफा के अन्दर प्रथम तो एक योजन विस्तार वाले महल में काम्बोज और बाल्हिक तथा वनायुज जाति के घोड़े पंक्ति बँधे हुए देखे ॥७४॥

पारशीकाः कच्छ देश्याः कांठालाः सिन्धुजास्तथा ॥
भूषिता पालिताश्चैव साधिता नर्त्तकाश्चते ॥७५॥

तथा पारसिक और कच्छ देशीय, कन्डाल जातीय, सिन्धु जातीय सुन्दर घोड़े जो सेवकों द्वारा पाले गए भूषित हैं जिनको ताल पूर्वक नृत्य करते हुए चलना सिखाया गया है उन सब घोड़ों को ॥७५॥

दृष्ट्वा देवौजस श्चेतद्विस्मयं हर्ष माययौ ॥
ततोऽग्रे चापरे गेहे हास्तिकं च तथाविधम् ॥७६॥

राजा देवौजस ने देखा महान आश्चर्य और हर्ष को प्राप्त हुए फिर उस घर से आगे दूसरे घर में जाने पर उसी प्रकार हाथियों की भी बहुत जाति की पंक्तियों को देखा ॥७६॥

भूषितं विविधै रत्नैः पालितैः साधितैः जनैः ॥
ददर्श नृपति स्तत्र ततश्चाग्रे जनैः सह ॥
मुनिनापि विवेशाथ दृष्टवान्कौतुकं परम् ॥७७॥

जो सेवकों के द्वारा पालित और विविध रत्नों से भूषित और सुन्दर चाल से चलना सिखाया गया है वहाँ के सेवकों ने यह वहाँ का दृश्य दिखाया और भी आगे मुनि के साथ राजा परम कौतुक देखते हुए जा रहे हैं ॥७७॥

नाना विधानि रत्नानि नाना वर्णै समानिवै ॥
काञ्चनानां करण्डेषु संचितानि समन्ततः ॥७८॥

Scanned by CamScanner

आगे चलने पर नाना वर्ण के विविध रत्न और स्वर्ण की करण्डियों में सुन्दर सजा करके चारों तरफ रक्खे गए हैं ।।७८।।

ग्रन्थिता हेम सूत्रैश्चाहाराश्चापि सुरत्नकाः ।।
देवछान्दादयश्चैव गुत्स गुत्सार्द्ध गोस्तनाः ।।७६।।

और स्वर्ण सूत्रों पर गुथे हुए भी बहुत से सुन्दर रत्नों के हार जिनका नाम देव छन्दादि (सौलरों वाले मोथियों के हार) गुत्स (लता के भेद से ३२ लरों के हार) गुत्सार्ध (चौवीस लरों वाले हार) गोस्तन (चौंसठ लरों वाले हार) ऐसा नाम है ।।७६।।

शृङ्गार सम्पुटाश्चापि सिन्दूर कज्जलादिभिः ।।
सर्वाङ्ग भूषणान्येव खचितानि सुरत्नकैः ।।८०।।

और भी वहुतसे श्रृंगारके संपुट कोई सुन्दर सिन्दूर के कोइ काजलके डिब्बे इसी प्रकार सर्वाङ्गके भूषण सुन्दर रत्नों से खचे हुए सब रक्खे हुए हैं ।।८०।।

स्त्रीपुंसोश्चापि भेदेन मंजीर नूपुरादिभिः ।।
किरीट कुण्डलाग्रैश्च शिरो रत्नादिभिस्तथा ।।८१।।

स्त्री और पुरुषों के भेद से कटि मेखला नूपुर क्रीट, कुण्डल, कण्ठभूषण, सिरो रत्न आदि बहुत से भूषण अलग अलग सजाकरके ढेरी के ढेरी रक्खे हैं ।।८१।।

पात्राणां च समूहास्तु रौप्य सौवर्णका स्तथा ।
भृङ्गारकाश्च स्थाल्योऽपि कुम्भाश्च कानकायताः । ८२

इसी प्रकार चाँदी और स्वर्ण के पात्र झारी थालो तथा घड़ा भी और अनेक प्रकार के स्वर्ण पात्र बहुत रक्खे हैं ।।८२।।

सौवर्ण विस्त जातं च रजताद्याणि तत्र च ।।
रक्षकै र्दर्शितं चैतत्पुनरग्रे प्रविश्य च ।।८३।।

दिव्य सुवर्ण के बने अथा चाँदी के बने अनेक पदार्थ तथा चौपड़ादिक खेलने की सामग्री इन सबको वहाँ पर रक्षकों ने मुनि और राजा को दिखाए फिर आगे प्रवेश किए ।।८३।।

महार्ह रत्नैः खचिता मञ्जूषाश्च करण्डकाः ।।
चतुर्विधानां वस्त्राणां दर्शितास्तै र्नृपाय च ।।८४

विसकीमतीय रत्नोंसे खचे सन्दूक तथा इसी प्रकार करण्डी इन सबमें रेशमी, ऊनी, सूती, कोड़ेके बने कटियादि चार प्रकार के अनन्त वस्त्रों के भन्डारोंको भी वहाँ के रक्षकों ने राजा को दिखाया ।।८४।

नाना वर्णानि वस्त्राणि बहु मौल्यानि भेदतः ।।
स्त्री पुंसोर्वयसाश्चेव भास्वराणि समंततः ।।८५।।

विविध रङ्ग के बहुत मोल वाले बहुत बस्त्रों को जो स्त्री और पुरुषों के योग्य हैं महान प्रकाश करते हुए चारों तरफ सजाए । सब दिखाया ।।८५।।

Scanned by CamScanner

ततोऽग्रे रथ कोट्यश्च रत्नानां बहु वर्णकाः ॥
सौवर्ण राजताश्चैव चतुश्चक्राष्ट चक्रकाः । ८६॥

उसके आगे बहुत रङ्गके विलकीमनीय रत्नों से खचे करोड़ों रथ किन्हीं के चार पहिया, किन्ही के आठ पहिया इस प्रकार सोना चाँदी के बने हुए दिखाये ॥८६॥

तत्र तेषां हया श्चैव भूषिताः शुभ लक्षणैः ॥
तत्रेव च विमानानि उप यानानि बहूनि च ॥८७॥

उन रथों के घोड़े सुन्दर लक्षण वाले सुन्दर रत्नों से भूषित हैं और उसी स्थान पर बहुत से विमान और उपायन भेंट की बहुत सी सामग्री सब है ॥८७॥

ततश्चाग्रेऽन्य पशवो मृगाद्या बहु जातिभिः ॥
एतत्सर्वं दर्शयित्वा तत्रै को मुख्य रक्षकः ॥८८॥

उसके आगे मृगादि बहुत जाति के अन्य पशु भी सब अपने २ रक्षकों से सुरक्षित हैं उन सब रक्षकों से सुरक्षित हैं उन सब रक्षकों के मुख्य एक रक्षक ने यह सब दृश्य (सम्पत्ति) को दिखाया ॥८८॥

राजानं प्रत्युवाचेति यदा यद्यभिकांक्षसे ॥
तदा तत्ते च सांनिध्यं करिष्यामि नरेश्वर ॥८९॥

और वह बोला कि हे राजन्! जो जो आपकी अकांक्षा हो वह सब आपके समीप में तुरन्त हम लोग पहुँचा देंगे ॥८९॥

पुत्रीणां च सुदायै तद्यातव्यं दिव्य कीर्त्तये ॥
पूर्वं चन्द्रमसास्मा भिरेतदर्थं च रक्षितम् ॥९०॥

आप अपनी कन्या और दामाद के लिए इस सम्पत्ति का दान करें यह आपकी महान् कीर्तिको बढ़ाने वाला होगा। चन्द्रमा ने पहले से ही हमको इस सम्पत्ति की रक्षा हेतु नियुक्त किया है हमने भी इस सबकी रक्षा की है ॥९०॥

तदयं मुनि जानाति कृपया यस्य भूपते ॥
दृष्टं त्वयापि लब्धं च धन शंकांनिवारय ॥९१॥

ये जो आपके साथ में मुनि महाराज हैं ये सब जानते हैं जिनको कृपा से आपने इस सम्पत्ति को देखा अब आप अपने धन की शका को त्याग दें ॥९१॥

पुत्र्युत्सव विधानं तु वित्त शंका विवर्जितम् ।
मुदाहि कुरु शीघ्रं च योग्यं योग्याय दीयताम् ॥९२॥

धन की शंका से रहित पुत्रियों के विवाह के उत्सव विधान को महान धन के दान पूर्वक प्रसन्न हो कर यथा योग्य जितना जिसको चाहिए उतना उसको दान दीजिये इस तरहसे विवाहोत्सव कीजिए॥९२॥

शिवोवाच--एवं तस्य वचः श्रुत्वा रक्षकस्य नराधिपः॥
देवौजा हर्षितोऽप्यासीन्मुनिरंतर्दधोहि सः ॥९३॥

Scanned by CamScanner

श्रीशङ्कर जो बोले कि इस प्रकार उन रक्षकों में मुख्य की बात सुनकर महाराज देवौजजी महान् हर्षित हो गये और साथ में जो मुनि रहे वे अन्तर्धान होगये ॥९३॥

तं हि चन्द्रमसो दूतं प्रणम्य च नराधिपः ॥
तेनैव दर्शित द्वाराद्बहिः शीघ्र मुपागमत ॥९४॥

उन रक्षकों में मुख्य जो उसको महाराज ने प्रणाम किया और उसी रक्षक के बताये हुए द्वार से शीघ्र उस गुफा से बाहर आये ॥९४॥

पूर्वां चिंतां निवर्त्त्यासौय दाय्यस्य कृपा मयं ॥
चरित्रं चिन्तयत्येव नितान्तं हर्षमानसः ॥९५॥

अब पहले महाराज को धन की जो चिन्ता थी वह अब निवृत्त हो गयी अपने पूर्वजों की महान् कृपामय इस अद्‌भुत चरित्र का चिंतवन करने लगे, नितान्त हर्षित मन हो गये ॥९५॥

अतर्कणीयं महिमान मेवमहाशयानां महतां सतां च॥
यैरु धृतोऽहं विपुलाम्बुधाराात्तेषां पदाब्जं शरणं प्रपद्ये।९६

महात्माओं की महान महिमा अतर्कनीय है। अहो! महात्मा सन्त बड़े गम्भीर आशय के होते हैं जिन्होंने इस विशाल चिन्ताके समुद्रमें से मेरा उद्धार किया। ऐसे सन्तोंके चरणकी मैं शरण हूँ॥९६॥

गणयन्तं गुणानीत्थं पूर्वजानां नरेश्वरम् ॥
उपाजग्मुः प्रधानेन विवाहाय सु सज्जनाः ॥९७॥

इस प्रकार सन्तों के गुणों को गुनते हुए और अपने पूर्वजों के पुण्य प्रताप का स्मरण करते हुए अपने प्रधान मन्त्री के साथ कन्याओं के विवाहोत्सव सजावट के लिये उद्यत होगये ॥९७॥

कार्य्येषु योजिता पूर्वंतद्विधाय समस्तकम् ॥
यथा योग्यं तत्र तत्र निपुणः कार्य्य कारिणः ॥९८॥

जिन सेवकों को पहले ही से विवाह के कार्यों में नियोजित किये थे वे होशियार कार्यकर्ता लोग बड़ी योग्यता से यथा योग्य कार्य को ठीक २ करके आये ॥९८॥

कृत प्रणामा द्दता राज्ञः यथा योग्यं समास्थिताः ॥
प्रसन्न वदनं दृष्ट्वायत्कृतं तन्नि वेदितम् ॥९९॥

महाराज ने भी प्रणाम करते हुए उन अपने सेवकोंको यथा योग्य सन्मानित किया। महाराजको प्रसन्न मन देखकर के सब सेवकों ने अपने २ किये हुये कृत्यों को निवेदन किया ॥९९॥

प्रसस्त मिति राजापि कृतज्ञस्ता न्समब्रवीत् ॥
पुनश्च स्मित शोभास्यः प्रधानं चावलोक्य च॥ १००

महाराज ने भी "बहुत अच्छा किया" ऐसा कहा और सबके उपकार का स्मरण किया। मन्द मुसुकाते हुए सुन्दर मुख चन्द्रसे अपने प्रधान मन्त्री को देखे ॥१००॥

लोकोत्तरं कीर्तिमूलं पूर्वजानांहि सत्कृतैः ॥
ईश्वरस्यानुकूलेन सखे सर्वंत्वया कृतम् ॥१०१॥

अहो ! पूर्वजों की लोकोत्तर कीर्ति का मूल ईश्वर से भी जो सत्कृत है हे सखे ! वह कार्य अब आपके करने योग्य है ॥१०१॥

श्रीमद्दशरथो राजा सेव्योऽसंख्य नराधिपैः ॥
वर जाने कुमारस्य तस्या संख्य महीश्वराः ॥१०२॥

असंख्य राजाओं से सेवित श्रीमान् महाराज श्रीदशरथ जी अपने कुमार की बारातमें असंख्य राजाओं को भेजे होंगे ॥१०२॥

पूजार्हास्तेऽप्य वश्यं मे रथ रत्न गजादिभिः ॥
तेन वै जायते कीर्त्ति रकीर्त्ति स्तद्विपर्य्यये ॥१०३॥

उन सबकी मुझे रथ रत्न गजादिकों द्वारा अवश्य पूजा करनी चाहिये इसी से हमारी कीर्ति इसके विपरीत भारी अपकीर्ति होगी ॥१०३॥

तादृशं वित्त मालोक्य कोशेषु नगरेष्वपि ॥
प्रजोद्वेगं विना सर्वं यत्नं कुरु सखेशुभम् ॥१०४॥

उन राजाओं के सत्कार के योग्य अपने खजानामें और नगर में जिससे किसी प्रकार प्रजा को उद्वेग न हो इस प्रकार के समस्त यत्नों से धन को देखकर के विवाह के शुभ उत्सव को कीजिये ॥१०४॥

प्रधानोवाच-अस्माभिः किं नदाकारै र्वापीभिः किं सपूर्य्यते
सागरस्तु प्रजाभिश्चह्यु पायानां शतै रपि ॥१०५॥

प्रधान मन्त्री बोले कि महाराज हम नदी और बावड़ी के समान साधारण प्रजा की उपायन भेंटसे सैकड़ों प्रकार भेंट होने पर भी क्या समुद्रके समान महाराज दशरथजीको पूर्ण होसकते हैं?॥१०५॥

परन्तु मुनिभिः शास्त्रै र्यज्ञे योगे सु तीर्थके ॥
यथा शक्ति तपस्त्यागो निर्णीतश्च विवेकिभिः ॥१०६

पर मुनियों ने और शास्त्रों ने विवेक पूर्वक यज्ञ योग तीर्थों में यथा योग्य तपस्या और त्याग करने को कहा है ॥१०६॥

ततः परं नात्म तुल्यं दानं वेदेषु कीर्त्तितम् ॥
तद्दास्यामो वयं सर्वे दासा स्तस्मै भवामहे ॥१०७॥

इससे अतिरिक्त दान का वेदों में कीर्तन नहीं है इस लिए अपनी योग्यता के अनुसार हम सब लोग महाराज को भेंट देंगे उसके अतिरिक्त उनके दास हम लोग हो जायेंगे ॥१०७॥

दुर्ल्लभे लब्ध सम्बन्धे किमेतच्चिंतनं प्रभो ॥
त्वं लघुश्चापि दाता सौ दान पात्रोऽप्यसौ महान् ॥१०८

हे प्रभो ! दुर्लभ स्थान पर सम्बन्ध प्राप्त होने से आप इस प्रकार की चिन्ता क्यों कर रहे हैं आप यदि छोटे भी हैं तो भी आप दाता हैं। वे महाराज यदि महान् भी है तो भी दानके पात्र हैं ॥१०८॥

शिवोवाच-इत्थं विवेक हास्येन चातुर्य्येणाति शीलितम्॥
नृपः श्रुत्वा प्रधानस्य वचनं च समासदाः ॥१०९॥

Scanned by CamScanner

श्रीशङ्कर जी बोले की इस प्रकार प्रधानमन्त्री ने वड़े विवेक पूर्वक हास्य करते हुए वड़ी चतुरता अति शीलवान शब्द कहा। प्रधान मंत्री के इस बचन को सव सभासद और महाराज ने सुना ॥१०६॥

विहसन्तः प्रशंशुश्च मुमुहुश्च परस्परम् ॥
इत्यन्तरे धनै वृद्धा वयो वृद्धाः प्रजासु ये ॥११०॥

हँसते हुए सबने मंत्री की प्रशंसा परस्पर बार२ की। इसी बीच में प्रजा के वड़े२ धनवान लोग और और अवस्था के भी बूढ़े लोग ॥११०॥

हयारूढा गजा रूढाः स्वर्णस्यंदन संस्थिताः ॥
नर वाहना स्तु केचिद्दिव्याम्वर विभूषणाः ॥१११॥

कोई हाथी पर चढ़े कोई घोड़ा पर चढ़े, कोई रिक्सा पालकी पर चढ़े दिव्य वस्त्रभूषणों से सजे ॥१११॥

नृप द्वारं समागत्य ज्ञापितः प्रति हारकः ॥
राज्ञेपि शूचितं तेनाभ्यन्तरं चादृता ययुः ॥११२
नाम्नां निवेदनैः कृत्वा प्रणामं सन्मुखं स्थिताः॥११३

महाराज के दरबार में आए। द्वार पाल ने उनका समाचार महाराज को दिया। महाराज भी उन सबका उचित आदर किए भीतर लिवा ले गये अपने नामों को निवेदन करके सबने प्रणाम किया सन्मुख विराजे॥११२-११३॥

तान्दृष्ट्वा सुखिनो राजा स्व पुत्रा निवधर्मिणः ॥
हर्हॅयवौ च धर्म्मात्मा पप्रच्छ कुशलोचितम् ॥११४॥

उन सबको देखकर महाराज वड़े सुखी हुए अपने धार्मिक पुत्र के समान उन सबके आचरण देख के बड़े हर्षित हुए। धर्मात्मा महाराज ने भी उन सवसे कुशल पूछी ॥११४॥

तदेको धनिनां मुख्यः कृत्वाकर पुटं सुधीः ॥
प्रत्युवाच नृपं प्रीत्या शीलेनाधः कृतेक्षणः ॥११५॥

उन धानिकों में जो मुख्य था उस बुद्धिमान ने हाथ जोड़कर बड़े प्रेम से सुशीलता पूर्वक नीचे को दृष्टिकरके महाराज को कहा ॥११५॥

आप्त योगे भृत्य पुत्र शिष्यै श्चैव स्वसाधितैः ॥
स्वामिन्स्वामी पिता श्रीमान्गुरुश्चैव न सेवितः॥११६

हे स्वामिन ? पर्याप्त समपत्ति होनेपर सेवक पुत्र शिष्य अपने साधनों से श्री मान पिता स्वामी गुरू इन सबकी यदि सेवा न की तो ॥११६॥

तदा तेषां कथं लोके कीर्त्तिधवलतां व्रजेत् ॥
वृथा गुणाः सम्पदोपि कथमात्मनिभाति वै ॥११७॥

तब उनकी कीर्ति लोक में किस प्रकार से उज्वलता को प्राप्त होगी तथा उनकी विद्या गुण सम्पत्ति भी कैसे अपने को अनुकूल होगी ॥११७॥

वाक्ये प्रीतिं प्रजानां च परीक्ष्य नृप सत्तमः ॥
प्रीत्यापि नीति संयुक्तं समुवाच श्रवः सुखम् ॥११८

इस प्रकार प्रजा की प्रेममयी वाणियों को सुनकर महाराज बड़े प्रेम से नीति युक्त कानों में अति सुख देनेवाले प्रिय शब्दों से बोले ॥११८॥

भृत्यं पुत्रं च शिष्यं च बृहत्कार्य्ये प्रयोजयेत् ॥
अनालोकित सामर्थ्यं स च कार्य्यं विनश्यति ॥११६

कि जो कोई अपने नौकर, पुत्र, शिष्य को उसकी सामर्थ्य को न देखकर बहुत बड़े कार्य में यदि नियोजित कर दे तो वह काम अवश्य नष्ट हो जायगा ॥११६॥

आप्त कार्य्य गृहो राजा प्रजाभ्योधन माहरेत् ॥
सकातरो जम्बुकश्च सुकृतं तस्य पापकम् ॥१२०॥

अपने मनमाना धन को प्रजा से हरण करने वाला राजा वह कातर है और गीदड़ है उसके सब पुण्य पापमयी हो जाते हैं ॥१२०॥

यत्परं परमा योग्यः करो राज्ञस्तु सत्कृतम् ॥
अन्यथा तु प्रजाहारी राजा दुष्टो हि पापभुक् ॥१२१॥

जो राजा के योग्य कर है वही राजा का सत्कार करने वाला परम धन है अन्यथा वह दुष्ट राजा प्रजा को लूटने वाला पाप का भागी होता है ॥१२१॥

प्रजासु निर्दयो राजा भवेत्संतान वर्जितः ॥
कदाचिज्जायते पुत्रः सभवेत्पितृ घातकः ॥१२२॥

प्रजा में निर्दयता रखने वाला राजा सन्तानसे हीन होता है यदि उसकी कहीं सन्तान हो भी गयी तो वह पुत्र पिता को मारने वाला होता है ॥१२२॥

यः प्रजा पुत्रयोरेक दृष्ट्या नैवावलोकयेत् ॥
सदुर्मेधाहि नृपति र्जार जन्मीविचार्य्य तां ॥१२३॥

जो राजा प्रजा और पुत्र को एक दृष्टि से नहीं देखता है वह दुर्बुद्धि है ; वर्ण शङ्कर है ; ऐसा उसको जानना चाहिए ॥१२३॥

तद्रूपये त्प्रजा भूपः शीक्षार्थं भय दर्शनम् ॥
कारयेत्पुत्र वात्सल्याद्धर्म्म शीलस्तु कथ्यते ॥१२४॥

जो राजा प्रजा को शिक्षा के लिए दूषित करके भय दिखाता है और अन्तरात्मा से पुत्र की तरह से प्रजा पर वात्सलय करता है वह राजा धर्मशील कहा जाता है ॥१२४॥

प्रजा सु वत्सलो यो वै धर्म्मशीलो महीश्वरः ॥
ईश्वरांशः सविज्ञेयश्चान्यथा पाप भाजनः ॥१२५॥

Scanned by CamScanner

जो प्रजा पर वात्सल्य रखने वाला धर्मशील राजा है उसको ईश्वर का अंश जानना चाहिए अन्यथा वह पाप का पात्र है ।।१२५।।

शिवोवाच-इत्थं प्रिय वचः श्रुत्वा कर्त्तव्यार्थं महीचितः ।।
स मुख्योहि प्रजानां य उवाचात्मान मास्तुवन् ।।१२६

श्री शङ्कर जी बोले कि इस प्रकार प्रजा जनता ने महाराज के प्रिय वचनों को सुन करके अपने कर्त्तव्य पूवक धन को महाराज के सामने रखकर उन धनिकों में मुख्य प्रजा की तरफ से स्तुति करते हुए, बोला ।।१२६।।

धन्या वयं महाराज प्रजा जाता तव प्रभो ।।
एतत्प्रजा सु वात्सल्यं त्वां विना दृश्यते कुतः ।।१२७।।

हे महाराज ? हम लोग आपकी प्रजा होकरके सब धन्य हो गये जो आपका हम प्रजा जनता पर इस प्रकार का वात्सल्य है ऐसा अन्य प्रजा को कहाँ दीख पड़ता है ।।१२७।।

स्वामी गुरुश्च जनकः कृतज्ञो विज्ञ साम्यदृक् ।।
लभ्यते सुकृतैरेव परत्रेहाध्व दर्शकः ।।१२८।।

आप हमारे स्वामी है ; गुरू हैं ; पिता हैं ; सब तत्व के जानने वाले हैं सम दृष्टि वाले हैं लोक परलोक दोनों देखने वाले हैं ऐसे राजा बड़े पुण्य के फल से मिलते हैं ।।१२८।।

पालनात्त्वं पिता साक्षाद्विनेता गुरुरेव हि ।।
न्यामकस्त्वपरः स्वामी शुभधर्म प्रवर्त्तकः ।।१२९।।

पालन करने से आप पिता होते हैं ; शासन करने से और शिक्षा देने से आप साक्षात गुरू होते हैं ; आज्ञा देने से आप स्वामी होते हैं और धर्म प्रेरक होते हैं ।।१२९।।

इत्थं प्रजास्तुत्य प्रजाधिनाथं प्रजासु वात्सल्य निधिं कृपालुम् ।।
स्वं स्वं समागत्य गृहोत्थ ताकं नृपं प्रशंसंति परस्परश्च च ।।१३०।।

इस प्रकार महाराज की प्रजा जनता ने स्तुति की। अपने पर वात्सल्ल रखने वाले कृपानिधान राजा को प्रणाम करके परस्पर महाराज की प्रशंसा करते हुए सब लोग अपने२ घरों को गए ।।१३०।।

राजा प्रधानेन ततो महीतलं गत्वा ददर्शाथ समस्त वैभवम् ।।
दृष्ट्वा प्रसन्नोऽपि विमोहितान्तर स्थितिं न लेभे कृत तर्क तार्किकः।।१३१

महाराज भी अपने प्रधान मंत्री के साथ उस पृथ्वी के अन्दर जब गुफा में गए तो मंत्री को अपना समस्त वैभव दिखाए। मंत्री भी देखकर अति प्रसन्न भी हुए और विमोहित भी हुए। अन्तरात्मा से स्थिति को न प्राप्त करके तर्क वितर्क करने लगे ।।१३१।।

समागमं मुने राजा वर्णयित्वा यथात्मनः ।।
अभूत पूर्वं सचिवोऽपि श्रुत्वा सी द्बोध माप्तवान् ।।१३२।।

अभूत पूर्वं सचिवोऽपि श्रुत्वा सी द्बोध माप्तवान्

राजा ने भी मुनिके समागमको यथार्थ रूप में वर्णन किया मंत्री भी अपूर्व घटना को सुनकर तब आत्मबोध को प्राप्त हुए ।।१३२।।

Scanned by CamScanner

राजा पुनः प्रधानेन समं जाने समास्थितः ॥
रचनां मण्डपादीनां दर्शितुं हर्षितो ययौ ॥१३३॥

महाराज फिर अपने प्रधान मंत्री के साथ पालकी में बैठकर बाहर आए; मण्डप आदिकों की जो रचना की गई थी उसको दिखाए ; बड़े हर्ष को प्राप्त हुए ॥१३३॥

योजनैकेन विस्तारो मण्डपस्य विराजते ॥
खण्डान्तर विभागेन लशदुच्चतरं महत् ॥१३४॥

एक योजज के विस्तार में वना हुआ वह विवाह मण्डप बहुत खन्ड खण्डान्तरों के विभागसे महान् उचचतर वना हुआ शोभित होरहा है ॥१३४॥

चतुरस्रं वहु द्वारे श्चतुर्दिक्ष्वपि शोभते ॥
मुख्य द्वाराणि चत्वारि कलशै स्तोरण ध्वजैः ॥१३५॥

उस मण्डप के चारों दिशा बहुत द्वार; अत्यन्त शोभायमान हैं मुख्य द्वार चार ही हैं जिन द्वारों के ऊपर गोपुरों में कलश, तोरण, ध्वजा शोभित हो रहे हैं॥१३५॥

पक्षिभिर्द्रुम जातैश्च क्रित्रिमैः शोभितानि च ॥
स्तम्भेषु मूर्त्तयः साक्षाद्राजन्ते कामिनी यथा ॥१३६

वृक्षों पर बैठे हुए पक्षी तथा बहुत सी कृत्रिम रचना शोभित हो रही हैं। मण्डप के खम्भाओं में साक्षात् स्त्रियों की मूर्तियाँ मंङ्गलथार लिए हुए शोभित हो रही हैं॥१३६॥

नाना वर्णैःस्थलं भूम्याः शोभते परमाद्भुतम् ॥
क्वचिज्जलं स्थलं क्वापि भाषते मणिभिः कृतम् ॥१३७

उस मण्डप के अन्दर और बाहर की भूमि नाना रङ्ग की परम अद्भुत शोभित होरही है। कहीं पर जल की तरह कहीं पर थल की तरह मणियों से वनाए गए प्रकाश कर रहे हैं ॥१३७।

स्वर्ण सुक्र वितानैश्च खण्ड खण्डान्तराणि च ॥
पिधान पट जालैश्च द्वाराणि संवृतानि च ॥१३८॥

जहाँ तहाँ स्वर्ण सूत्रों के वने कपड़ों से खण्डर प्रति कमरों में वितान तने हैं; विछावन विछे हैं; गद्दियाँ विछी हैं; जहाँ तहाँ जालियाँ वनी हैं; किसीर खन्ड में कोई किवाड़ बन्द हैं, कोई खुले हैं। ॥१३८॥

सप्तावर्णानि वर्णैश्च शोभन्ते सप्तभिस्तथा ॥
मध्य भागो विशालोऽपि विशेष रचनान्वितः ॥१३९

ये सब दरवाजे और महल समान रङ्ग के सुन्दर शोभित हैं इस प्रकार के सात आवरण वाले महलों से यह मण्डप शोभित है। मध्य के विशालभाग के विशेष रचना की गई है ॥१३९॥

दीपायनै महादीप्तै वितान मणि गुम्फकैः ॥
शोभितेऽति पक्षि संघैर्मणिभिः क्रित्रिमैस्तथा ॥१४०॥

दीपों के वृक्ष, दीपदन्ड दीपावली की तरह से शोभित हैं। मणियों से गुम्फित वितान स्वयं प्रकाशमान हो रहे हैं इसी प्रकार पक्षियों के समूह तथा मणियों की चित्र विचित्र रचना अति शोभित हो रही है ॥१४०॥

स्तम्भानां श्रेणयो दिव्या बहुभिर्वर्णकैः शुभाः ॥
शोभन्ते मूर्तिभिः सर्वा कर कञ्ज कला युताः ॥१४१॥

मणियों के जो दिव्य बहुत रङ्ग के स्तम्भ लगे हैं अतिशय सुन्दर शोभित हो रहे हैं उन खम्भों में जो मूर्तियाँ हैं उनके हाथों में यंत्र लगा हुआ जिनके द्वारा कृत्रिम रचनाएं कार्यकलाप युक्त हो रही हैं॥१४१॥

तत्र सिंहासनं रत्नै र्महार्हैः खचितं शुभम् ॥
विशालं बहु वर्णाभिः स्तम्भ श्रेणिभिरा कुलम् ॥१४२॥

उस मण्डप के भीतर रत्नों से खचित सुन्दर सिंहासन बहुत विशाल बहुत रङ्ग की खम्भों की पंक्तियों से घिरा हुआ है ॥१४२॥

तोरणै र्गज मुक्तानां मणि जालैः प्रकाशितम् ॥
विशाल दर्पणैः कान्त प्रतिबिम्बदयच्छविः ॥१४३॥

गजमुक्ताओं के तोरण मणियों की जालियों प्रकाशित बड़े२ दर्पणों से बहुत प्रकार प्रतिबिम्बों द्वारा शोभित है सुन्दर छवि हो रही है ॥१४३॥

विवाह भूषणैर्भ्राज त्कोटि कन्दर्प सच्छविः ॥
यत्रस्थास्यति रामस्तु वधुभिरभिषेकितः ॥१४४॥

विवाह के भूषणों से प्रकाशमान करोड़ों कामदेव की छवि वाले अपनी वधुओं से पाणिग्रहण अभिषिक्त श्री राम जी उस स्थान पर विराजेंगे ॥१४४

तत्-सिंहासनान्ते स्यात्पद्मासनं सुकाञ्चनम् ॥
षोडशाष्ट गुणारंच चतुरावृत रञ्जितम् ॥१४५॥

उस सिंहासन के अन्दर स्वर्ण का कमल आठ सोलह, बत्तीस, चौंसठ दल वाला चार आवरण का अति शोभित है ॥१४५॥

कृत्रिमैः सारसैः हंसैः कादम्ब शुक कोकिलैः ॥
कृत्रिमैर्गुल्म लेखाभिश्च तुर्दिक्ष्वपि शोभनम् ॥१४६॥

कृत्रिम पक्षी सारस, हंस, कलहंस जलकुक्कुट, शुक, कोकिलादिकों से और कृत्रिम वृक्ष लितादि आदिक उस मण्डप के चारों तरफ अति शोभित हैं ॥१४६॥

वर जान निवासाय स्वर्ण स्तम्भावलम्बिताः ॥
स्वर्ण छत्रैश्चित्रिताश्च खण्डान्तर्भि दायताः ॥१४७॥

और बरातियों के निवास के लिए जनवासा भी स्वर्ण खम्भावलियों से तथा स्वर्ण छत्रों से चित्रित कई खण्डों वाले महल बनाए हुए तैयार हैं ॥१४७॥

गृहास्ते सचिवेनाथ स्वनाथा पेक्षणायिता: ॥
एवं नृपा ज्ञया यच्चरचितं रचनान्वितम् ॥१४८॥

इस प्रकार के बहुत से महल जिनको देखकर इन्द्र ललचाता है महाराज देवौज जी की आज्ञा से दिव्य रचनायुक्त महलोंको प्रधान मंत्री ने बनवाया ॥१४८॥

दृष्ट्वा गृहं समागत्य पुनश्च मण्डलेश्वरान् ॥
नृप नामाह्वितु लिख्य प्रेषिता बहु पत्रिका ॥१४६

इह प्रकार के महलों की देखकरके फिर महाराज देवौज जी फिर अपने मण्डलिक बहुत से राजाओं को आमंत्रित करने के लिए बहुत पत्रों को लिखर कर दूतों को भेजा ॥१४६॥

एवं राजानुकूलेन विवाहोदिश्य सार्वकं ॥
महामात्येन तत्सर्वं कृत्वा राज्ञे निवेदितम् ॥१५०॥

इस प्रकार महाराज ने विवाह के योग्य बहुत से अनुकूल कृत्यों को प्रधान मंत्रीके द्वारा कराया प्रधान मंत्री ने भी शीघ्र सब कार्यो को तैयार करके महाराज के लिए निवेदन किया ॥१५०॥

केवलं वर जानस्या गमने शेष चिन्तनम् ॥
नान्यचिंचता नृपस्या सीत्सचिवो हि विचक्षणः ॥१५१

अब केवल वरातियों के आने की चिन्ता बाकी है और कोई चिन्ता बड़े होशियार मंत्री के होने से महाराज देवौज जी को नहीं है ॥१५१॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुमा महेश्वर सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्चः पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५५॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्च पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ॥५५

शिवोवाच—अथ प्रातः समुत्थाय शास्त्र निर्दिष्ट सत्क्रियाम्
कृत्वा देव समाकारो देवौजा उन्मनाः शिवे ॥१॥

श्री शङ्कर जी बोले कि महाराज देवौज जो रात्रि में शयन करने के वाद प्रातः काल उठे। शास्त्र विहित सत्कर्मों को किए। देवताओं के समान दिव्य दर्शन महाराज देवौज जी प्रशन्नमन होकर ॥१॥

आगत्य च सभायां स बरजाना गमं मुदा ॥
चिन्तयन्कथय नास्ते सभ्यै बंधु जनैस्तदा ॥२॥

अपनी सभा में अ ए। बरात के आने के प्रसङ्ग में चिन्तित अपने बन्धु वर्ग सज्जनों के समाज में कुछ आपसी विचार करहा रहे थे ॥२।

तावच्च प्रेषित स्तस्य दूतो ग्रामाधि कारिणा ॥
आगत्य पत्रिकातेन दत्ता हर्ष प्रचारिका ॥३॥

उसी समय महाराज देवौज जीके राज्य में रहने वाला ज़िलाधीस ने दूत को भेजा था वह त पत्रिका लेकर राजसभा में महाराज के हाथ दी उस पत्र को पढ़कर बड़ा हर्ष उत्पन्न हुआ ॥३॥

Scanned by CamScanner

तदा शीघ्रं महात्मात्य उत्थाय शकटान्वहून् ॥
मिष्ठान्नेन च संभार्य्यदधि भाराड समूहकं ॥४॥
फलानि वहु विधान्ये वं वेसवाराभिधं तथा ॥
रसाभिधं समग्रश्च ताम्बूलादि समस्तकम् ॥
वहु मौल्या न्यंसुकानि भूषणान्यपि वाहनम् ॥५॥

उस समय शीघ्र महामंत्री उठकरके वहुत सी बैल गाड़ियों को सज करके उन गाड़ियों में अनेक प्रकार के मिष्ठान, दही के वर्तन समूह भर करके तथा बहुत प्रकार के फलों को भी और मसाला आदिकों को भी इसी प्रकार रसीले पदार्थों को भी पांन आदिक सामग्रियों से युक्त और विविध प्रकार के विसकीमतीय वस्त्रों को तथा भूषणों कै और अनेक प्रकार की सवारियों को ॥४-५॥

एवं वहुवस्तु जात मसंख्यै र्भार वाहकैः ॥
शकटैश्चाप्य संख्यैश्च वरजानस्य सन्मुखं ॥६॥

और भी बहुत सी सामग्रियों को असंख्य भार बाहकों द्वारा तथा बैलगाड़ियों के द्वारा वरात के सन्मुख भेजा ॥६॥

मङ्गलार्थान्काञ्चनांश्च वारि पूरितकान्घटान् ॥
मस्तके वारमुख्यानां तथा चान्यो पचारकम् ॥७॥

और माङ्गलिक स्वर्ण कलश जल से भरे हुए वैश्याओं के सिरों पर रक्खे हुए आम पल्लव स्वस्तिक चिन्हों से चिन्हित, जवांकुर और भी माङ्गलिक सामान लिए हुए ॥७॥

निपुणैः सचिवैश्चान्यैर्यत्नेन ह्यादरार्थकम् ॥
प्रेषितं तत्सुमन्तेन प्रशंस्यांगीकृतं मुदा ॥८॥

साथ में वहुत से होशियार मंत्रियों को देखकर वरात के मङ्गल दर्शनार्थ भेजा गया। इधर श्री सुमंत्र जी ने भी बड़ी प्रशंसा पूर्वक उत्सव सामान को स्वीकार करके प्रसन्न हुए ॥८॥

दर्शितं वर वेषाय श्रीरामाय समस्तकम् ॥
वशिष्ठोऽपि समालोक्य वस्तु सर्वं मुदं ययौ ॥९॥

दुल्हा वेष में श्री राम जी के लिए वह सब सामान मङ्गल दर्शन दिखाया गया। महाराज श्री वसिष्ठ जी उन सब वस्तुओं को देखकर बड़े प्रसन्न हुए ॥९॥

पार्वत्युवाच-कयातैश्च सुमन्ताय सुरीत्या मुनये जनैः ॥
निवेदितं वस्तु यत्र द्विस्तारेण वदप्रभो ॥१०॥

श्री पार्वती जी बोलीं कि उन देवीज जी के द्वारा भेजे हुए सामान को उनके मंत्रियों ने श्री सुमंत्र जी और वसिष्ठ जी के लिए किसरीति से निवेदन किया हे प्रभो ? इस प्रसङ्ग को विस्तार से कहिए ॥१०॥

दाने दैन्यं श्च लावण्यं विनयं प्रीति रुत्तमा ॥
सम्बन्धिनी हि दीप्यं ते महतीश्च परस्परम् ॥११॥

क्योंकि दान में दीनता, लावण्यता, परस्पर उत्तम प्रीति, विनय सन्बन्धिनी ही महान् प्रकाशमान अच्छी होती है ॥११॥

शिवोवाच-नान्दिकायाः पञ्च क्रोशं दूरं तु वरजानकम् ॥
स्थितं श्रीरामचन्द्रस्य योजनाष्ट परिवृतम् ॥१२॥

श्रीशङ्कर जो बोले कि हे पार्वती नन्दिका नगरी से पांच कोश की दूरी में ठहरी है वह बरात पांचवा कोश से लेकर ३७ वें कोस पर्यन्त ३२ कोस में श्रीरामजी की बरात ठहरी है ॥१२॥

पार्वत्युवाच--किंचावात्सु रयोध्यायां केवले वरजानके ॥
आगता रामचन्द्रस्य जना यदि समूहिताः ॥१३॥

पार्वती जी बोलीं कि यदि इतनी जनता श्रीरामजी की बरात में चली आयी तो तब श्रीअयोध्या जी में कितने लोग रहने के वास्ते बच गये ॥१३॥

स्थितेर्येषां तु विस्तारो योजनाष्ट परिक्रमन ॥
एतन्मे विस्मयो देव कथयस्व कथं हितत् ॥१४॥

क्योंकि जिनका बत्तीस कोस के बिस्तार में पड़ाव पड़ा है अब अयोध्या जी में कितनी जनता बच जायगी। यह मेरा विस्मय है कि वह कैसे होगया, कृपा करके इस प्रसंगको कहिये ॥१४॥

शिवोवाच-प्रभावो न त्वया ज्ञातो मुनीनां विस्मयं करः॥
अयोध्यायास्ते न चात्रशङ्का वै वरि वर्त्तते ॥१५॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती जी ! तुमने श्रीअयोध्या जी के महत्व को नहीं समझा क्योंकि वह तो मुनियों का भी विस्मय पैदा करता है। यह श्रीअयोध्या जी का प्रसंग अद्भुत है इसीलिए सबको शंका हो जाती है ॥१५॥

अथउर्द्धैक ब्रह्माण्डं पूर्यंते चान्न कोष्टवत् ॥
सूक्ष्मैश्च जन्तुभि र्यावद योध्यायां शिवे शृणु ॥१६॥

जिस तरह कोठा में अन्न भरा जाता है उसी तरह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के जितने जीव हैं वे सब श्रीअयोध्या जी में ॥१६॥

एकैत्रमण्डले तावद्दिव्या नार्य्यो नरा स्तथा ॥
स्वात्म वैभव संयुक्ता असम्बाधा वसन्ति वै ॥१७॥

एक ही मण्डल के अन्दर उतने जीव दिव्य नर-नारी रूप में अपने आत्मीय वैभव विस्तार तथा अपने निवास विलास सुपास पूर्वक बिस्तार से रहते हैं ॥१७॥

वायोश्च मनसश्चैव वेगेन गरुडस्य च ॥
अयोध्यायां भ्रमन्कल्पशतं पारं न लभ्यते ॥१८॥

श्रीअयोध्या जी का सम्पूर्ण बिस्तार पता लगाने के लिए वायु की गति से और मन की गति से तथा गरुड़ की गति से सौकल्प तक भी घूमा जाय तो भी आदि अन्त पता नहीं लगेगा ॥१८॥

न चैव नाम्नो हि न चैव धाम्नो-
रामस्य सौन्दर्य्य गुणाधिकानाम् ॥
लीला विलाशस्य च वैभवस्य-
पारन्तु गन्तुं प्रभुरेव काश्चित् ॥१६॥

श्रीरामजी के नाम, रूप, लोला, धाम का बिलास लीलाओं का तथा वैभव सम्पत्ति का इसी प्रकार शौन्दर्य गुणादिकों का यदि कोई पार पाना चाहे तो कोई भी इसमें समर्थ नहीं है । इस लिए इस बिषय में तुमको शंका नहीं करनी चाहिये ॥१६॥

योजनानि च तान्यष्ट परिवर्त्य विराजते ॥
वस्त्रैः रचित प्राकारो रत्नैः खचित दीप्तमान् ॥२०॥

बत्तीस कोस के मण्डल में जो बराती लोग ठहरे हैं उनके चारों तरफ वस्त्रों से बना रत्नों से खचित महान मणिमय परकोटा प्रकाश कर रहा है ॥२०॥

तस्यान्तरेऽन्य प्राकाराः विभागेन विरोपिताः ॥
यथा योग्यं जनाः सर्वे चातुर्वर्ण्यास्तु तत्र च ॥२१॥

उसके भीतर में एक और परकोटा है जिसके अन्दर कई बिभाग बने हुए चारों वर्णों की जनता के लिये यथा योग्य स्थान बने हुये हैं ॥२१॥

वस्त्रागारे विशालेहि सुखेननिवसन्ति ते ॥
उच्च ध्वजैश्च कलशैः शोभते नगरं यथा ॥२२॥

उन चारों बर्णों की जनता की जनता के लिये जो सुख पूर्वक रहने के लिए वस्त्रों के बिशाल महल बने हैं, वे ऊँचे ध्वजा कलशादि से एक विशाल नगर के आकार में शोभित हुए ॥२२॥

सर्वेषां मध्यवर्त्ती तु राज्ञां निवसतिर्यथा ॥
तेषामपि मध्यभागे महोच्च कलशैः ध्वजैः ॥२३॥

उन सब बरातियों के मध्य भाग में जिस तरह राजा का राजकिला होता है उसी तरह का एक कोट बना हुआ है उस कोट के मध्य भाग महान् ऊंचे कलश ध्वजाओं से शोभित हुए ॥२३॥

निर्मिताः स्वर्ण सूत्रैस्तु नाना रत्नेश्च शिल्पिभिः ॥
चित्रिता वस्त्र प्रासादास्त्रय एवातिशोभनाः ॥२४॥

स्वर्ण सूत्र के बने हुए वस्त्र के तीन महल अति शोभायमान शिल्पियों द्वारा नाना प्रकार के रत्नों के चित्र विचित्र रचना युक्त बने हैं वे तीनों महल अति शोभायमान हैं ॥२४॥

तत्रै कस्मिन्वशिष्ठस्तु मुनिराट मुनिभिः सह ॥
एकस्मिन्सचिवोमुख्यास्ते बहुभिः सचिवैः सह । २५॥

उन तीनों में से एक में सब मुनियोंके साथ मुनियों के राजा श्रीवसिष्ठ जी निवास करते हैं और एक में बहुत से मन्त्रियों के साथ प्रधान मन्त्री श्रीसुमन्त्र जी निवास करते हैं ॥२५॥

Scanned by CamScanner

विराजते सुमन्तश्च श्रीमद्दशरथेन सः ॥
सम्मान्ये जनै र्योग्यो राजभि र्बहुभिस्तथा ॥२६॥

जो सुमन्त्र जी सब मन्त्रियों के द्वारा और बहुत से देश के आये हुये राजाओं द्वारा महाराज श्रीदशरथ जी की तरह से सर्वमान्य हो रहे हैं ॥२६॥

द्वयोर्मध्ये प्युच्चतमो विशेष रचनान्वितः ॥
तस्मिंस्तु सखिभिः सार्द्धं वर वेषो महाद्युतिः ॥२७॥

इन दोनों के मध्य भाग में दोनों से ऊँचा रचना में सबसे अधिक एक महल है जिसमें बहुत से सखा राजकुमारों के साथ दुल्हा वेश में महान् प्रकाश करते हुए श्री राम जी निवास करते हैं ॥२७॥

अत्रापि लक्ष्मणो नैव खचित्तिंसिहासनो परि ॥
राजते चामरैश्छत्रैः सेवितो रघुनन्दनः ॥२८॥

उस महल के भीतर रत्न खचित सिंहासन के ऊपर बैठे हुए श्री राम जी की श्री लक्ष्मण जी आदि सब सखा वर्ग छत्र चँवरादि से सेवा करते हैं ॥२८॥

तत्र प्रातः समुत्थाय पूर्वां संध्या मुपास्य च ॥
सुमन्तो राम मालोक्य दृष्ट्या वात्सल्य वृत्तयः ॥२६

इस प्रकार महल में निवास करते हुए श्री सुमंत्र जी प्रात काल उठे; स्नान सन्ध्योपासनादि नित्य कर्म करके वात्सल्य स्नेह दृष्टि से श्रीराम जी को देखे ॥२६॥

शीघ्रं प्रयोज्य स्नानादि क्रियासु तस्य सेवकान् ॥
सांनिध्यं हि वशिष्ठस्य कृत्प्रणामस्तदादृतः ॥३०॥

और श्री राम जी के स्नानादिक प्रातः कालिक क्रियाओं के लिए सेवकों को प्रेरणाकरके श्री बसिष्ठ जी के पास आए; प्रणाम किए; श्री वसिष्ठ जी ने भी आप का आदर किया ॥३०॥

बध्वाञ्जलिं च संभाष्य लब्धानुज्ञो मुनेस्तदा ॥
राजानश्चैव ये सभ्याः पौराश्चैव सुबान्धवाः ॥३१॥

और बैठनेकी आज्ञा दिए। इस प्रकार हाथ जोड़ करके मुनि महाराजसे आज्ञा पाकरके फिर बरातमें जो राजा लोग तथा सभ्य जन और पुरवासी बन्धु वर्ग सभी बरातियों को उचित कार्यों में नियोजित किए ॥३१॥

प्रातिहारैः समानीत्वा व्यवहाराय तेन च ॥
योजिताहि सभाचाग्रे सभास्थाने सुकल्पते ॥३२॥

महाराज सुमंत्र जी के प्रेरणा से प्रतिहारी लोग सबको बुलाकरके लाए। सबसे पहले एक सभा करके उस सभा स्थान में निश्चित विचार हो जाने पर आगे कार्य के लिए तैयार हो ही रहे थे ॥३२॥

प्रेषितो यायनस्यै व विनयेन निवेदितुं ॥
देवौजसा नृपेणाथ निपुणः सचिवोहियः ॥३३॥

Scanned by CamScanner

कि उसी समय महाराज देवौज जो ने जो चतुर मंत्री को वरातियों के नम्रतापुर्व स्वागत के लिए नियुक्त किया था वह मंत्री ॥३३॥

तेनै व सचिवेनात्र सादिनः सुधयश्चये ॥
प्रेषिता समयं ज्ञातु मति वेग युतैर्हयैः ॥३४॥

आकर के उस वरायियों के निवास स्थान के वाहरी फाटक से द्वार रक्षकों को सभा में भेजा, वे दूत भी शीघ्र गति के घोड़ों पर बैठ करके सभा स्थान पर आए ॥३४॥

आगत्य निपुणै दू रात्समालोक्य समन्ततः ॥
जनानां पृच्छनवै सर्वं वृत्तंते च ततो गताः ॥३५॥

बड़े चतुर उन दूतों के दूर के आते हुए वरात की जनता ने उनसे पूछा उन दूतों ने भी सम्पूर्ण वृत्तान्त जहाँ से आए सब कहा ॥३५॥

तैश्च विज्ञापितोऽमात्यः सादिभिर्निपुणैस्तदा ॥
शीघ्रं चचाल सद्धिश्च वेष्टितो बहुभिर्जनैः ॥३६॥

उन वराती व्यक्तियों ने प्रधान मंत्री श्री सुमंत्र जी को भेट कराया। उन दूतों ने सब समाचर मंत्री जी से कहा। सुनकर मंत्री जी भी बहुत से सज्जनों को साथ लिए हुए उन मंत्री जी के स्वागत के लिए चञ्चल हुये ॥३६॥

प्राप्तोयदाहि जानस्य वस्र दुर्गस्य सत्प्रभम् ॥
द्वारं तदा च द्वारस्थैः शीघ्रमागत्य सूचितः ॥३७॥

और उन दूतों के द्वारा प्रकाशमान दुर्ग के वाहरी फाटक पर खड़े हुए मंत्री को शीघ्र सूचित किया ॥३७॥

तदा चात्र सुमन्तेन सादराय च सन्मुखं ॥
प्रेषिताः सभ्य सचिवास्तैः सभायां सुवेसितः ॥३८॥

तव तक श्री सुमंत्र जी ने भी आदर पूर्वक सन्मुख लाने के लिए अपनी सभा के सभ्य मंत्रियों को भेजा उन मंत्रियों ने देवौज जी के मंत्री का स्वागत सत्कार करके सभा में लिवा लाए ॥३८॥

विचक्षणो बृहत्याहि सभायां सोऽपि सत्क्रमात् ॥
वशिष्ठं च सुमन्तं च बंधश्लेष्य परस्परम् ॥३९॥

वे देवौज जी के मंत्री भी बहुत बड़ी महाराज वसिष्ठ जी और सुमंत्र जी की सभा को देखकर क्रमशः श्री वसिष्ठ जी को और श्री सुमंत्र जी को प्रणाम किए। परस्पर अङ्क आश्लेषण हुआ ॥३९॥

सभ्यान्वहू न्ववं दाथ दृष्ट्या हस्तानु भावतः ॥
समुत्थायादृतः सभ्यैः सुमन्ताग्रे च तिष्ठवान् ॥४०॥

तत्पश्चात् बहुत से सभ्यजनों को भी दृष्टि के पात से अनुभावपूर्वक प्रणाम किया उन सज्जनों ने भी उठकर आदर किया उसके बाद सुमन्त्र जी के आगे वैठाए गये ॥४०॥

Scanned by CamScanner

बध्वांजलिं स मतिमान्प्रणयान्मधुरं वचः ॥
उवाच देश कालज्ञः सुमन्तं सुविलोक्य च ॥४१॥

वे देवौज जो के मन्त्री बड़े बुद्धिमान नम्रता प्रणय शब्दों से देशकाल के अनुसार श्रीसुमन्त्रजी को देखकर बोले ॥४१॥

अमात्योवाच–यू यं खलु सपर्य्यार्हाः कृपया गमनं पुनः।
भवन्तो या दृशो देवा नवयं पूजका स्तथा ॥४२॥

हे महाराज ! आप सब तो महान हैं हम छोटे लोगों के यहां अहैतुकी कृपा से परिवार संयुक्त आपका आगमन हुआ आप जैसे उत्तम देवता हैं हम तैसे पुजारी नहीं हैं ॥४२॥

परन्तु भूषण स्थाने पुष्पैर्देवा न्प्रपूजयेत् ॥
नहि तेषां तु वित्तस्य तृष्णा भाव युषांकिल ॥४३॥

परन्तु जैसे देवताओं के लिये भूषणों के स्थान पर पुष्प दिये जाते हैं देवता भी धन तृष्णाभाव से रहित फूलों से ही भावपूर्वक पूजित हो जाते हैं ॥४३॥

तान्येव शुचि गन्धेन हीनानीश इव प्रभो ॥
गृह्णन्तु मेऽर्क पुष्पाणि स्वामिना ह्यर्पितानिवै ॥४४॥

तथा सुगन्धि व पवित्रता से रहित होने पर भी मदार के फूलों को हे प्रभो ! आप मेरे मदार के फूलों को स्वीकार कीजिये। ऐसा कहने वालों के फूलों को शङ्कर जी स्वीकार करके प्रसन्न हो जाते हैं उसी प्रकार आप सब हमारे स्वामी की सेवा से प्रसन्न होवें ॥४४॥

सुविनीतं वशिष्ठोपि सुमन्तोपि सभाजनाः ॥
अमात्यस्य वचः श्रुत्वा मुदं चैनं प्रसंशिरे ॥४५॥

इस प्रकार महाराज देवौज जी के मन्त्री की नम्रता पूर्वक वाणी को सुनकर श्री वसिष्ठ जी भी तथा सुमन्त्र जी और सभी सभाजन भी प्रसन्न होकर मन्त्री के शब्दों की प्रसंशा करने लगे ॥४५॥

लिपिं करास्तु सचिवा द्रष्टुं वस्तु समग्रकम् ॥
प्रेपिताश्च सुमन्तेन सेवकाश्रपि सुव्रताः ॥४६॥

और श्री सुमन्त्र जी ने आई हुई भेंट की सामग्रीके मैनेजरों से बात करने के लिये अपने सुन्दर व्रत वाले सेवकों को भेजा ॥४६॥

दृष्ट्वा दृष्ट्वा सुपत्रे तु यावत्सर्वं विचक्षणैः ।
लिखित्वा श्रावितं श्रुत्वा सभ्यैश्च वहु नामतम् ॥४७

उन सुन्दर व्रत वाले सेवकों ने भी मैनेजरों द्वारा प्राप्त हुई कापी में जितने भी सामानों को लिखा था उन सब सामानों को कापी के अनुसार मिलाकर देखा और सही दस्तखत देखकर के तथा सज्जनों को उस समाचार को सुनाया ॥४७॥

महार्हाणि सुवस्त्राणि काञ्चनं भूषणादि यत् ॥
खचितं च बहुमूल्यं तच्छभायां निदर्शितम् ॥४८॥

Scanned by CamScanner

विसकीमतीय सुन्दर बस्त्र रत्न जटित स्वर्ण भूषण जितने भी हों उन सब विसकीमतीय पदार्थों को सभा में लाकर सबको दिखाया ॥४८॥

शिरः सम्पुट विश्लेषाज्जनानां दृष्टि रोधनम् ।
मयूखैर्भूषणानां तु सभायां कृत मद्भुतैः ॥४९॥

अद्भुत भूषणों से भरे हुए संदूक अपने सजावट के प्रकाश से जनों की दृष्टि को रोक रहे हैं ऐसे सन्दूकों को रखकर के सभा में लाये हुए नौकरों की बहुत भीड़ है ॥४९॥

तदा सुमन्तेन समस्त मेतत्प्रदर्शि तुं भूषण वस्त्र जातम् ।
रामः समानीत उपस्थितेन स्वस्यात्म जे नात्मजतः प्रियः सः॥ ५०

उस समय श्री सुमन्त्र जी ने समस्त बस्त्राभूषण सम्पत्ति की सुन्दरता को दिखाने के लिए उसी सभा में उपस्थित श्रीरामजी को पास बुलाया क्योंकि अपने प्रिय पुत्र से भी अधिक श्रीरामजी सुमन्त्रजी को प्रिय लगते हैं ॥५०॥

प्रेम्णां सुमंतेन सलक्ष्मणं च समागतं तु निवेश्य चाङ्के ॥
रामं विशालाम्बुज श्रोणिताक्षं निधाय सांनिध्य निवेदितंतम्॥ ५१

पास में आये हुए लक्ष्मण जी के साथ श्रीरामजी को जी ने प्रेम से गोदी में बैठाया। लाल कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले श्रीराम जी के लिए उन आई हुई भेंट की समस्त सामग्रियों को निवेदित किया ॥५१॥

देवौजसोऽमात्य उदार रूपं रामस्य चालोक्य चमत्कृतिं गतः ॥
कस्मात्कुतः कुत्र किमर्थ मित्थं मनोमयं मूर्ति मयं बभूव ॥५२॥

महाराज देवौज जी के मन्त्री रूप की उदारता चमत्कार से चौंक कर श्रीरामजी को देखने लगे और मैं कहां से कहां पर किस लिये आया हूं ? मैं कौन हूँ ? यह सब भूलकर श्रीरामजी के दर्शन तदाकार सुमनोमय मूर्तिमय होगए ॥५२॥

सभा प्रवेशाद्रघुनन्दनस्य यदुत्थितं चोत्थित मेवतेन ॥
पुनर्न चेतः स्थित मुत्थितम्वा निमेषहीनत्व मुपेत्य नेत्रे ॥५३॥

श्रीरघुनन्दन जी के सभा में प्रवेश करने से जो खड़े थे खड़े रह गये फिर उनको मैं खड़ा हूँ या बैठा अपने शरीर की चैतनता न रह गयी, निमेषहीन नेत्रों से श्रीरामजी को देखने लगे ॥५३॥

प्रेम्णो विलोक्यास्य दशां च सद्भिर्जाड्यं त नौ चेतसि मोदमात्रम्॥
विधायिनीं स्थापित आसनेसः करौ गृहीत्वा तु बृहत्सभायाम्॥५४

सज्जनों ने देवौज जी के मन्त्री के शरीर में जड़ता चित्त में केवल आनन्द मात्र इस प्रकार की दशा को देखा तो हाथ पकड़ करके उस महान सभा के बीच में उचित स्थानमें विधान पूर्वक बैठाया ॥५४॥

ततो विलम्बेन सलब्ध संज्ञो विचिंत्य चेवात्मनि कार्य्यभारम्॥
पुनः पुनः प्रांजलिना प्रणम्य मुनिं सुमन्तं च समस्त सभ्यान्॥ ५५

Scanned by CamScanner

इसके बाद बहुत देरी में मन्त्री जी होश में आये मेरे ऊपर बहुत बड़े कार्य का भार है ऐसा विचार करके बार २ हाथ जोड़ करके श्री वसिष्ठ जी औ श्रीसुमन्त जी को तथा समस्त सभ्यजनों को प्रणाम किया ॥५५॥

विलोकनं स्मेरशुभाषणश्च हस्तानु भावं पदयोः क्रमश्च ॥

मूर्ति मनोज्ञं रघुनन्दनस्य निधाय स्वान्तः करणे सु प्रीत्या ॥५६॥

मन्द मुसुकाते हुए प्रसन्न मन सबको देखकर के अपने हाथोंके अनुभाव से सुहराते हुए सबका दर्शन किया, भाषण किया, अपने अंतःकरण में अतिशय अनुराग पूर्वक अतिमन रमणीय श्रीरघुनन्दन जी की मूर्ति को अंतःकरण में धारण किये ॥५६॥

जनैरसंख्यैः परिवारित श्चगजेन शीघ्रं वहु कार्य्य कारी ॥

ययौ महोत्साह मनाः पुरं तद्दिशो दशाप्ते किल तुर्य्यनादे ॥५७

उसके बाद असंख्य सेवकों से घिरे हुए सरलता से बहुत कार्यों को शीघ्र करने वाले मन्त्री जी महान उत्साहित मन होकर के दशो दिशाओं में तूरी आदिक बाजाओं का महान् नाद जहां छा गया है उस अपनी नगरी में प्रवेश किये ॥५७॥

आद्ये दृशी यस्य कृतेः प्रवृत्तिः स्वर्णै र्नभश्छादित मात्मशक्त्या ॥

तस्योत्तराकैः किमुवर्णनीया सभ्यास्तदेत्थं नृपतिं प्रशंशुः ॥५८॥

जिनकी आत्मशक्ति से आकाश स्वर्ण से छा गया जिन श्रीरामजी के लिए प्रथम ही इस प्रकार की प्रवृति हो गयी वे राम जिनके घर में आरहे हैं उनके चरित्रों को अब क्या वर्णन किया जा सकता है इस प्रकार सभ्य लोग महाराज देवौज जी की प्रशंसा करने लगे ॥५८॥

उपाय नार्पितोमात्ये गते देवौजसस्त्वतः ॥

सुमन्तेन च वशिष्ठेन भोजनाय स वेलतः ॥५६॥

मन्त्री जी उपायन भेंट वर के लिए समर्पण करके अपने राज दरवार में लौट जाने पर इधर सुमन्त्र जी और श्रीवशिष्ठ जी ने भोजन का समय जान करके ॥५६॥

प्रयोजिता जनाः सर्वे तेषां तेषां निवासके ॥

प्रेषितं मिष्ठ पक्वान्नं यदद्यै व च ह्यागतम् ॥६०॥

सभी बरातियोंके निवास स्थानमें मिष्ठ स्वादिष्ट पकवान पकवान बहुत प्रकारके जो अभी ताजे आये थे सबके पास स्थान २ में भेज दिये ॥६०॥

ते सर्वेपि च मिष्ठानं स्वादु स्वाद्विति शंशयन् ॥

भुक्त्वा भुक्त्वा च मध्यान्हे ताम्बूल माध्य सुष्वपुः॥६१

वे सब बराती लोग भी बहुत मीठा है बहुत मीठा है ऐसो प्रशंसा कर करके स्वाद ले लेकर के भोजन किये इस प्रकार मध्याह्न कालिक भोजन होने पर पान पाके विश्राम कर गये ॥६१॥

अथ यामैक शेषे तु दिवसे ... सूचनाय च ॥

स्वर्ण दण्ड धरा दासाः प्रतिवासं सहस्रशः ॥६२॥

एक याम दिन शेष रहने पर सबको सूचना देने के लिए स्वर्णदण्ड धारी दास हजारों की संख्या में सब बरातियों के पास प्रत्येक के निवास स्थान में गये ॥६२॥

सज्यतां सज्यता मुच्चैः शीघ्रं शीघ्रं च सज्जनाः ॥
दिव्य भूषाम्बर धराद्गृणन्तोपि च बभ्रमुः ॥६३॥

हे सज्जनों ! शीघ्र तैयार हो जाइये, शीघ्र तैयार हो जाइये,—इस प्रकार ऊँची आवाज देते हुए दिव्य बस्त्र भूषणधारी बोलते हुये भ्रमण कर रहे हैं ॥६३॥

श्रुत्वा श्रुत्वा जनाः सर्वेद्वास्थाना मुच्च शब्दकम् ॥
कृत्वा रथैश्च डयनैरश्वैश्च नाग जानकैः ॥६४॥

सब बराती जन भी इन द्वारपालों के शब्दों को सुन २ करके अपने२ रथ, पालकी, घोड़े, हाथी, यान सबको सज २ करके ॥६४॥

नागैरपि बिमानैश्च नाना भूषण भूषितैः ॥
परितः संस्थिताः सर्वे समैव्यूहं यथा क्रमात् ॥६५॥

हाथियों के ऊपर नाना भूषणों से भूषित हौदाओं को कस २ करके तथा सभी सवारियों से और अपनी सजावटों यथाक्रम व्यूहाकार सबके सब तैयार होगये ॥६५॥

तद्दृष्ट्वा तु सुमन्तेन श्रीरामोवर भूषणः ॥
उच्चैरिभस्थ आनीतो देहे ह्यात्मेव चिद्वृत्तिः ॥६६॥

श्री सुमन्त्र जी ने सबकी इस तैयारी को देखकर दुल्हा वेष में शृङ्गार हुए श्रीरामजीको ऊँचे हाथी के हौदा में लाकर बैठाया क्योंकि अपने आत्मज पुत्र की सी वृत्ति से सुमन्त्र जी का स्नेह है ॥६६॥

च चाल यानं सहसा मुखेभ्यः —
शेषस्य जिह्वाद्वि सहस्रमुग्रम् ॥
अतीवभारा न्निसृतो बहिस्तु —
रामस्य नागाश्वरथाकुलं तत् ॥६७॥

बरात के अगुआ लोगों के चलने पर दो हजार उग्र जिह्वा वाले शेष जी का सिर सहसा डोल गया, जीभें मुखों से बाहर निकलीं क्योंकि श्रीरामजी के बरात के हाथी घोड़े रथ आदि सम्पूर्ण बरात के भार शेष के सिर में अतिशय भार होगया ॥६७॥

अश्वानां च खुरैश्चक्रैः रथानां पाद चारिणाम् ॥
आकाशमावृत्तं पादै रुत्थितै र्बहूरेणुभिः ॥६८॥

घोड़ों के खुरों से, रथों के पहियों से, पैदल सेना के चरणोंसे उठे हुए धूल ने आकाश को चारों तरफ घेर लिया ॥६८॥

दिशश्च पूरिताः घोषै र्वाद्यानां घन नादिनाम् ॥
न शृण्वन्ति समापेपि भाषमाणाः पर स्परम् ॥६९॥

बाजाओं की सघन आवाज ने दशों दिशाओं को गुञ्जित कर दिया। परस्पर बातचीत करने वाले समीप में बात करने पर भी नहीं सुन पाते हैं ॥६६॥

जाते वंश प्रदीपानां क्षणैकत्र निशामुखे ॥
क्षितेर्निः सृत्यक्षितिजैः गगने किं कृता सभाः ॥७०॥

शाम के समय वंश दीपों से आकाश में इकट्ठे होने पर ऐसी शोभा होती है कि जैसे मानों पृथ्वी में हजारों मंगल ग्रह उत्पन्न होकर के क्या आकाश में सभा लगाये हैं ? ॥७०॥

उत्थाने ज्वलितानां तु बहु क्रोशान्तरे तदा ॥
इत्थं शोभा ह्याविरासी त्तत्किं के नापि कथ्यते ॥७१॥

जलते हुए उन वंश दीपों के उठा लेने पर बहुत दूर कोस पर्यन्त ऐसी अद्भुत शोभा होती है कि उसको कौन क्या कह सकता है ॥७१॥

वंदिनां प्रति हाराणां वाद्य घोषान्महोच्चक न्॥
कोलाहलं मनुष्याणा मतीत्य मूर्छितागिरः ॥७२॥

बन्दी और प्रतिहारियों के बाजाओं का घोष महान् ऊचा उठा हुआ मनुष्यों के कोलाहल को भी अतिक्रमण करके दिशाओं को मूर्छित कर रहा है ॥७२॥

विदधु र्वारवध्वश्च जनैर्वाह्ये सहस्रशः ॥
विमाने काञ्चने शोभां नर्त्यंत्यो यत्र तत्र च ॥७३॥

इसी प्रकार हजारों जनों से ढोये गये यान में वार वधूओं का संगीत कल्लोल उस स्वर्णविमान में अत्यन्त शोभित हो रहा है इस प्रकार के वार वधुओं का नृत्य उस बरात में जहां तहां होरहा है ॥७३॥

जटादि संस्कृताश्चान्ये चतुराणां भ्रमंकराः ॥
यानस्थाश्च कौतुकेन पश्यतां बहुरूपिणः ॥७४॥

और इसी प्रकार जटा आदिकों से सजे हुए अंग वाले, चतुरों को भी भ्रमित करने वाले बहुरूपिया लोग भी इसी प्रकार विमानों में बैठे हुए कौतुक कर रहे हैं। सभी बराती लोग देख करके अति प्रसन्न हो रहे हैं ॥७४॥

अथेत्थ मुच्च हर्म्याणां भूषिताया मनोहाराः ॥
कलशैर्ध्वज संघेश्च पुर्याः परम हर्षिताः ॥७५॥

इस प्रकार आती हुई बरात के नन्दिका नगरी के ऊचे महलों में कलश ध्वजा समूहों से सजी हुई नगरी में सुन्दर भूषित अङ्ग वाली मनोहर स्त्रियायें देखकर अतिशय हर्षित हुई ॥७५॥

सन्मुखं तु समाने तु निः सृताः वर जानकम् ॥
सुसज्य कौतुका संख्ये राज्ञः पौराश्च बान्धवाः ॥७६

बरात के सन्मुख स्वागत करने के लिए महाराज देवौज जी ने तथा पुरवासी बन्धु वर्गों ने असंख्य कौतुकों को सजा करके सामने रक्खा है ॥७८॥

भ्रातादेवौजसः साक्षात्सुबली गज वाहनः ॥
पुत्रौ स्वयं च भ्रातुश्च यो मुख्यः सचिवो महान् ॥७७

महाराज देवौज जी के साक्षात भाई श्री सुखेली जी हाथी पर चढ़ करके और अपने भ्राता के पुत्रों को तथा प्रधान मन्त्रीको साथ लेकरके ॥७७॥

सुवाहना भूषिताश्च पौराये राज मान्यलाः ॥
वाग्मितः शोभनाः सर्वेस्वादरे निपुणः सताम् ॥७८॥

और भी राजमान्य लोगों को तथा नागरिक के प्रधान लोगों और विद्वान् चतुर वोलने वालों को जो कि सबके आदर करने में निपुण सन्त हैं उनको साथ लेकर ॥७८॥

स्वयं देवौजसा राज्ञा महता माद्दतु यथा ॥
तथा कारं प्रेषितास्ते सम्यग्व्यवसिताहिये ॥७९॥

जिनका महाराज देवौज जो को स्वयं स्वागत करना चाहिये इस प्रकार के अपने आत्मीय जनों को सम्यक प्रकार सब इन्तजाम के साथ निश्चित होकर देवौज जी भेजा ॥७६॥

अथ दूरादुभयतो मुदा चन्द्र करा इव ॥
दृष्ट्वा च दृष्टय स्तेषां प्रसृताश्च परस्परम् ॥८०॥

इन भेजे हुए लोगों ने तथा उधर से वराती लोगों ने दोनों तरफ की दोनों तरफ जनता ने चन्द्रमा के किरणों की तरह प्रकाश करते हुए देखा। देखने वालों की परस्पर चकाचौंधी हो रही है ॥८०

क्षणेन सविधं प्राप्ताः शीघ्रं प्रेरित वाहनाः ॥
अवतीर्य्यावतीर्य्याथ मिमेलुश्च परस्परम् ॥८१॥

अपने समाज की सवारियों को शीघ्र प्रेरणा करते हुए एक क्षण में दोनों बरातें परस्पर विधान पूर्वक प्राप्त होगयी। अपनी सवारियों से उतर २ करके परस्पर दोनों पार्टियों के लोग मिल रहे हैं ॥८१॥

द्वयोर्मध्ये सेनयो स्तु विस्तृता स्तरणं बृहत् ॥
विस्तारितं च तत्रैव मुख्या येऽत्र च तत्र च ॥८२॥

दोनों तरफ के वरातियों के मध्य विस्तार पूर्वक भूमि में बिछावन बिछे हुए हैं। उन बिछावनों पर मुख्य लोग जो जो जहां के हैं अपने २ समाज का विस्तार विधान उचित रूप में कर रहे हैं ॥८२॥

मुहूर्त्तमेक मास्थाय सं स्वज्यैव परस्परम् ॥
आप्रच्छ्य कुशले प्रष्ण मनु मोदेन वार्त्त या ॥८३॥

परस्पर आलिंगन करके एक मुहूर्त तक तो प्रसन्न स्थिर रहकर फिर परस्पर कुशल प्रश्न अति अति आनन्द पूर्वक बातें हुई ॥८३॥

ततः सर्वे मिलित्वातु चचालाग्रे सुवाहिनी ॥
प्रदीपानां महज्जाते प्रकाशे चाति विस्तृते ॥८४॥

इसके बाद सब कोई मिल जुल करके बरात को आगे चलाये मार्ग में दीप वृक्षों का महान प्रकाश अति विस्तार है ॥८४॥

Scanned by CamScanner

अथोच्च हर्म्येषु च हेम पात्रे निरीक्ष्य रामं गज संस्थितं च॥
नार्य्यास्तु वामेपि च दक्षिणे तेलाजान्ववषुश्च नीराजयंति ॥८५॥

इस प्रकार नन्दिका नगर में बरात के पहुँचने पर ऊँचे २ दोनों तरफ के स्वर्ण महलों में स्वर्ण पात्रों में मांगलिक साजों को सजी हुई नारी गज हाथी पर चढ़े हुए दुलहा वेष में श्रीरामजी को देखकर दाहिनी और बायीं तरफ से लावा बरषाती हैं, आरती करती हैं ॥८५॥

इत्थं पुरस्त्रीभिरनंगएव नीराजितस्तद्धृदयानु भावैः॥
विवेशवासं श्वसुरेण दत्तं महार्ह रत्नैः परितः प्रकाशम्॥८६

साक्षात् कामदेव के समान श्रीरामजी को देखकर नगर की स्त्रियों ने अपने हृदय के अनुभाव पूर्वक इस प्रकार आरती करके इसके बाद श्वसुर के द्वारा दिये हुए बिसकीमतीय रत्नों से चारों तरफ से प्रकाशमान जनवासे में प्रवेश किया ॥८६॥

अथामात्यैः प्रतिहारैः सर्वेषां च यथा यथं॥
राज्ञामपि च सर्वेषां निवासायांशुका गृहाः ॥८७॥

मन्त्रियों ने और प्रतिहारियों ने तथा अन्य माण्डलिक राजाओं ने बरात में आये हुये सभी लोगों का यथा योग्य सबका सत्कार करके जनवासे के अन्दर वस्त्रों के महलों में ठहराया ॥८७॥

मञ्चपर्यङ्क पीठादि भोज्य पानादि संभृतः॥
निर्दिष्टाः स्वादरेणैव निपुणै सेवकै युताः। ८८॥

प्रत्येक बराती के स्थान पर कुर्सी पर्यंक स्टूल और भक्ष, भोज्य, पानादिक पदार्थ यथा योग्य आदर से चतुर सेवकों द्वारा सब बरातियों को उचित रूप में प्राप्त हुए ॥८८॥

सुखेनतेपि सद्वासं लब्ध्वाहि विगतश्रमाः॥
प्रशंसुर्नृपतिं सर्वे महाभागं धनायतम् ॥८९॥

बराती लोग भी सुन्दर निवास स्थान को प्राप्त करके अति सुख पूर्वक श्रम से रहित हुए। सब के सब श्रीदेवौज महाराज के विस्तार धन और महाभाग्य की प्रशंसा करने लगे ॥८९॥

इत्यन्तरे महाराजो महामान्येन साधुभिः॥
देवौजा विप्र वृन्देन सेवितो सह राजभिः ॥९०॥

इसी बीच में बहुत से सन्त ब्राह्मण वृन्द तथा मान्य वर्गों से और राजाओं से घिरे हुए ॥९०॥

समादतुं समागत्य वर जानेहि सज्जनान्॥
प्रथमं च वशिष्ठं स ववन्दे विनयान्वितः ॥९१॥

बरातियों के स्वागत के लिये जनवासे में आये। प्रथम बड़ी नम्रता पूर्वक श्रीवशिष्ठ जी को प्रणाम किया। ॥९१॥

ततः परं कौशलेश प्रतिमंराम वत्सलं॥
नत्वा सुमन्तं प्रीत्या च समास्वज्य परस्परम् ॥९२॥

उसके बाद महाराज श्रीकोसलेश जी के प्रतिनिधि श्रीरामजी में अत्यन्त वात्सल्य रखने वाले श्रीसुमन्त्र जी को बड़े प्रेम से नमस्कार किये, परस्पर आलिंगन हुआ ॥६२॥

सभ्यानपि यथा योग्यं नत्वा चाश्लिष्य सन्मतः ।

सर्वैश्चै वादृतः श्रीमानासने दिव्यतिः स्थितः ॥६३॥

उसके बाद सभी सज्जनों को यथा योग्य आलिंगन, सबके द्वारा सन्मान आदर प्राप्त करके दिव्य महान् शोभा सम्पन्न आसन पर सबके द्वारा आज्ञप्त होकर के बैठे ॥६३॥

ततश्च निपुणो वाग्मी कृतज्ञो गुणवान्कविः ॥

उवाच वचनं राजा समानीय करा वुभौ ॥६४॥

उसके बाद बड़ी निपुणता पूर्वक सुन्दर बोलने वाले बड़े गुणवान कवि दूसरे के उपकार को जानने वाले महाराज देवौज जी दोनों हथ जोड़ करके इस प्रकार बोले ॥६४॥

धृतो हं मूर्ध्नि युष्माभि स्तृण वद्गिरिभि र्यथा ॥

तत्कथं स्तौमि हेदेव वाग्विचौ रपि दुर्वलः ॥६५ ।

कि आप लोगों ने मेरे को उसी तरह से अपना लिया जिस तहर से पर्वत अपने सिर पर घास को रख लेते हैं । हे देव ! धन और वाणी से अत्यन्त दुर्वल मैं आपकी कैसे स्तुति करूं ॥६५॥

प्रति कर्तुं प्रभुर्नाहं भवतां मयियत्कृतिः ।

लब्ध प्रकाश पद्मं हि रवे रूंप करोतिकिम् ॥६६ ।

आपने मेरे ऊपर जितनी कृपा की उसका प्रति उपकार करने को मैं समर्थ नहीं हैं । सूर्य से विकाश को प्राप्त हुआ कमल का सूय का क्या उपकार कर सकता है ॥६६॥

सतामचिंत्य चरित मनिष्ट मिष्टतां व्रजेत् ॥

चकार योगिनां ध्येयं छारं विषधरं विषम् ।६७॥

सन्तों के चरित्र से तो अनिष्ट भी बहुत मीठेपन को प्राप्त हो जाता है जिस तरह से शङ्करजी ने विषधर सर्पोको और भस्मको अपने शरीरमें लगाकर योगियों से ध्यान करने योग्य वना दिया ॥६७॥

संसर्गे णोच्च तां याति संसर्गेणाध एव च ॥

वायुना मेरु शिषरं रजोधो याति वारिणा ॥६८॥

सज्जनों के संसर्ग से उच्चता और अधमों के संसर्ग से नीचता यह ऊँच नीच का कारण संग ही है । जिस तरह से धूल वायु के संग से सुमेरु पर्वत के शिखर पर और जल के संग से नीचे गडढे में पहुँच जाती है ॥६८॥

मन्नि मित्तं दूर देशा च्छ्रमेण गमनं हि यत् ॥

सेवया सेवकस्यैव तद्यथा हि निवर्त्तते ॥६९॥

मेरे निमित्त बहुत से बड़े परिश्रम करके जो आप लोग आये हैं सेवक का उसी तरह से सेवा करने से प्रति उपकार हो सकता है ॥६९॥

Scanned by CamScanner

तत्रा हं सेवनेनाथ सर्बथा हीन शक्तिकः ॥

केवलं तुष्यतां देव ह्यपराधस्य भाजने ॥१००॥

परन्तु हे नाथ! मैं तो उस सेवा के स्थान में भी सर्वथा हीन शक्ति का हूँ। बहुत बड़े अपराध का पात्र मैं हूं हे देव! केवल अपने स्वभाव से ही मेरे अपराध को क्षमा करके सन्तुष्ट हो जाय ॥१००॥

इत्थं विनीत वचनैः स्वात्म कीर्ति विभावकैः ॥

सभा प्रसादयं स्तैश्च शृण्वन्स्वात्म प्रशंसया ॥१०१॥

इस प्रकार अपनी कीर्ति को बढ़ाने वाले विनीत वचनों से सारी सभा को प्रसन्न कर दिया। सब बरातियों ने भी अपनी प्रशंसा को सुनकर के महाराज देवौज जी की प्रशंसा की ॥१०१॥

पूर्बां गिरं तु नृपतिः समाजेन स्व मन्दिरं ॥

यामैक विगतायां तु रात्रौ सर्वान्प्रणम्य च ॥१०२॥

महाराज देवौज जी भी इस प्रकार सन्मान पा करके सबको प्रणाम करके अपने समाज सहित अपने समाज में चले गये। इस प्रकार एक याम रात्रि बीत गयी ॥१०२॥

आजगाम प्रसन्नात्मा ततः सर्वैर्जनैः सहः ॥

कृत्वा सुभोजनं रामो वशिष्ठेन च वन्धुना ॥१०३॥

इधर बराती लोग भी प्रसन्न मन होकर अपने स्थानों में तथा श्रीराम जी व श्रीवसिष्ठ जी मन्त्री जी आदि बन्धु वर्गों के सहित सुन्दर तरह से भोजन किये ॥१०३॥

सुमन्तेन परं स्वादु श्वशुरेणैत्र प्रेषितम् ॥

सुश्वाप नर्म्मशय्यायां सेवकैः परिसेवितः ॥१०४॥

इस प्रकार श्वसुर द्वारा भेजा हुआ स्वादिष्ट भोजन को पाकर के सेवकोंसे सुन्दर से सेवित हो करके सबके सब नर्म शय्याओं में शयन कर गये ॥१०४॥

वैतालि कास्तं गुणीनः प्रभाते स्वरैर्मनोज्ञैर्यशसां सुगानम् ॥

वीणा सुकांश्यै स्त्वरुणोदयेग्रे कुर्बन्ति तालैश्च विनिद्रयंतुम् ॥१०५

प्रातःकाल गाने वाले गुणी लोग बिविध प्रकार के मन रमणीय राग तानों से यश कीर्ति का गान करते हुए वीणा मृदंग झाल वंशी आदि बाजाओं से सुन्दर ताल पूर्वक गा करके अरुणोदयके समय में निद्रा रहित किये ॥१०५॥

उत्थाय चा वेच्च नरेन्द्रसूनो दिशं विलंघ्याथ दिनेश व्याजात् ॥

तवानन स्पर्द्धि मयङ्क मल्पम्प्राची प्रतापः प्रबलः समुत्थः॥१०६

गाने वालों ने गीत में यह कहा है कि हे नरेन्द्रकुमार सूर्य के बहाने आपका प्रबल प्रताप आप के मुखचन्द्र की वृद्धि कामना से कुछ देर दिशाओं में रुक करके फिर उदय हो रहा है, आप देखिये॥१०६

दिशः प्रधावन्ति वयोविहाय वृक्षेशयावास गृहान्तु निद्राम् ॥

गायन्ति ते राघव सद्गुणांश्च कञ्जेशयाः षटपद राजयोद्यः॥१०७

वृक्षों में शयन करने वाले पक्षी लोग अपनी निद्रा और निवास स्थान को त्याग करके दशों दिशाओं में दौड़ रहे हैं और आपके गुणों को गा रहे हैं इसी प्रकार हे राघव ये कमलों पर शयन करने वाले भ्रमर भी आपके सद्‌गुणों को गा रहे हैं ॥१०७॥

पुष्पाणि संस्पृस्य सुफुल्लितानि प्रशंसरे त्सौरभ शीलिताश्च ॥
तथापि ते पद्म मुखानुसग्गी द्विशेषते जुस्तु विभाति वायुः॥१०८॥

यद्यपि खिले हुये पुष्पों के स्पर्श से पराग और सुगन्धि द्वारा ये भोरों और वायु लथपथ भी हो रहे हैं तौ भी आपके मुख कमल के संसर्ग की विशेषता से लालायित हो रहे हैं ॥१०८॥

निशा मयङ्केन सुखं रमन्ती निरीक्ष्य ते राघव सप्रतापम् ॥
भ्रमं विधायेति रविः किमुत्थो द्रुतारुणाख्यं वसनं खलंती॥१०६

हे राघव ! यह अरुण नाम वाली प्रीति रात्रि में चन्द्रमा के साथ सुख पूर्वक रमण करती हुई प्रातःकाल आपके प्रताप को देख रही है और क्या यह सूर्य तो नहीं उदय हो रहा है इस प्रकार के भ्रम को मन में पैदा करके यह अरुण अनुराग रूपी नायिका सूर्य रूप नायक से विलास करने के लिए दिशाये रूप वस्त्रों को खोल रही है ॥१०६॥

सुपालिता दृष्टिकरे स्पृशाभ्यां गजाहया राघव शोभनास्ते ॥
प्रसह्य वन्धान्सुमुमोचयन्ते तान्वीक्ष्य चोत्थाय मनोहराङ्ग॥११०

आपकी दृष्टि और हाथों का स्पर्श प्राप्त किये हुए जो ये हाथी घोड़े हैं ये हे राघव ? आपसे सुन्दर पालित होने से असह्य हुए इस बन्धन से मुक्त हो रहे हैं। हे मनोहराङ्ग ? आप उठिये और इनको देखिये ॥११०॥

ईर्ष्यन्तिशय्या मपि पक्षिणस्ते सूत्रेण हेम्मस्तु निवद्ध पादाः ॥
गृहीत हस्तात्शुचि सेवकानां तान्वीक्ष्य चोत्थाय सुखेल स्वेलान्॥१११

हे मनोहराङ्ग ये ! स्वर्ण के सूत्र से बँधे हुए चरण वाले आपके पवित्र सेवकों से पकड़े गये पक्षियां भी आपको शय्या का डाह कर रहे हैं। आप उठिये इनके खेले हुये खेलों को देखिये ॥१११॥

त्वद्दर्शनस्पर्शन वाक् सुखेन प्रतोषिताः सेवक जातयस्ते ॥
वस्त्राणि दिव्यासन वीटिकाद्यं गृहीतहस्ताहि विलोकयत्वम्॥११२

आपके दर्शन स्पर्श वाणी के स्वाद के सुख से सन्तुष्ट हुए जितने भी आपके सेवक जाति के हैं वे सब दिव्य वस्त्र, दिव्य भोजन, दिव्य पान वीणादिक अपनी २ सेवा की सामग्रियों को हाथों में लिए हुये खड़े हैं आप उठकर इनको देखिये ॥११२॥

सुवर्ण पुंखेपत्र एष चापौ निहत्य शत्रूंश्च करात्मका स्ते ॥
निशा वियोगास्तु करस्य तेद्यः संश्लेषमिच्छन्ति सुभूपितस्य॥११३

यह स्वर्ण की पांख वाले बाण और धनुष आपके करकमल के स्पर्श से सुखी होनेवाले शत्रुओं का नाश करके अब इस रात्रि में आपके करकमलका वियोग पाकर सुन्दर भूपितांग हुये आपसे आश्लेषण चाह रहे हैं ॥११३॥

प्रफुल्ल कञ्जायत लोचनं त्वां पर्वेन्दु दर्पघ्न मनोहरास्यम् ॥
आलिंगितुं स्मेर हँसत्सु वाग्मिश्चोत्कण्ठितास्ते कुशलाः सखायः ११४

शरद पूर्ण चन्द्र के मानमर्दन करने वाला आपका महोहर मुखचन्द्र खिले हुए कमल सदृश विशाल नेत्र वाले मन्द मुसुकाते हुए सुन्दर वाणी से बोलते हुए आपको आलिंगन करने के लिए अति कुशल जो आपके सखा वर्ग हैं वे अतिशय उत्कण्ठित हो रहे हैं ॥११४॥

गुरु र्वशिष्ठोपि सुमन्त एषः सखापितुस्ते शुचि वत्सलोऽसौ ॥
त्वय्येव तौ तोषय दर्शनेन मान्यौ त्वया शील वता पितेव ॥११५॥

ये श्रीगुरू वशिष्ठ जी महाराज तथा आप में जो पवित्र वात्सल्य रखने वाले आपके पिता के सखा ये श्रीसुमन्त्र जी भी आपके द्वारा सुन्दर शील आदिकों से आदरणीय हैं आपके दर्शन से ही ये सब लोग सन्तुष्ट होंगे, आप सबको सन्तुष्ट कीजिये ॥११५॥

सुराधिपस्यापि गतेर्कवंश्याश्च गीयते स्माभिरसद्यशस्कं ॥
पीत्वा सुधां किं लवणाम्बु पानं करोत्यभद्रं भुवनेश सूनो ॥११६

हे भुवनेशकुमार ! सूर्यवंशियोंके गीतोंको गाने वाले हम लोग आपका गान करने के बाद फिर हम इन्द्र का भी गान नहीं करेंगे क्योंकि अमृत का पीने वाला क्या असत् यश रूप अभद्र खारे समुद्र के जल का पान करेगा ? [अर्थात् नहीं करेगा] ॥११६॥

इत्थं सदर्थोचित पाद बद्धा श्रुत्वा जजागार गिरं च तेषाम् ॥
निर्मीलनोन्मीलन नेत्रशोभी जृंभाङ्ग कृष्ट्या स जयत्यनंगम्॥११७

इस प्रकार सुन्दर अर्थों से भरे हुए पाद बद्ध छन्दों से गाये हुये उन गायकों के गीतों को सुन कर श्रीरामजी जागे। नेत्रों को खोलते बन्द करते हुए तथा अद्भुत शोभित जमुहाई लेते हुए श्रीरामजी कामदेव को आकर्षित करके जीत रहे हैं ॥११७॥

उत्काक पक्षा वृतगण्ड मण्डलं नाशाग्र मुक्ता फल लम्बिताधरम्॥
हँसन्लसद्रक्त रदालि भासं रामो ददर्शात्म मुखं सुदर्पणे॥११८

सिर के काक पक्ष सदृश बालों से भूषित कपोल वाले और नासिका में मुक्ता फल के अधरों में झलकते हुए मन्द मुसुक्यान में दांतों की अरुणिमा भ्रमरों की तरह से झलक रही है। इस प्रकार के अपने मुखचन्द्र को श्रीरामजी सुन्दर दर्पण में देख रहे हैं ॥११८॥

धृत्वा शिरोवेष्टन सुप्रदीप्तं स्कन्धेविधायेकऽनुपीत वासः ॥
साधारणा भूषितपादहस्त स्ते नाधिकं मोहित मोहनाङ्गः ॥११६॥

इसके बाद सिर में सुन्दर प्रकाशमान पाग को धारण किये और कन्धे में सुन्दर पीत वस्त्र को धारण किये तथा साधारण भूषणों को हाथ पांवादि अंगों में धारण किये इस प्रकार अपने अंग से अनङ्ग को भी मोहित किये ॥११६॥

स्मृत्वा वशिष्ठं च सुमन्त मात्मनि सद्वत्सलैकान्त निबद्ध भावकम्॥
तौ वन्दितुं शीघ्र गतिं चचाल सः सलक्ष्मणो संख्य जनानुभावितः॥१२०

Scanned by CamScanner

और श्रीवसिष्ठ जी को और श्रीसुमन्त्र जी को तथा अपने में वात्सल्य भाव रखने वाले एकान्तिक स्नेह में बँधे हुए भाव वाले स्नेहियों को स्मरण किये, और श्रीवसिष्ठ जी श्रीसुमन्त्र जी दोनों को प्रणाम करने के लिये शीघ्र गति से आसन पर से उठे और श्रीलक्ष्मण जी के सहित बहुत से दौड़ने वाले सखाओं के सहित श्रीरामजी श्रीवशिष्ठ जी को व श्रीसुमन्त्र जी को प्रणाम किये ॥१२०॥

नत्वा सुभावेन गुरोः पदाब्जयो लब्धवाशिषं सर्वमनोरथ प्रदाम्।
ततः सुमन्तस्य सुनीउ मंसुकं विवेशगेहं ह्यनुजेन राघवः ॥१२१॥

सुन्दर भाव से गुरु महाराज के चरणों में प्रणाम करके सब मनोरथों को सिद्ध करने वाले आशीर्वाद को प्राप्त करके उसके बाद श्रीसुमन्त्र जी को प्रणाम करने के लिए अपने अनुजों के सहित श्रीरामजी सुन्दर शोभायमान वस्त्र के महल में प्रवेश किये ॥१२१॥

कृतप्रणामं तमवेक्ष्य रामं शीघ्रं समुत्थाय स लक्ष्मणं च ॥
आश्लिष्य तेनापि निधाय चांके सुलालितौ हर्ष भरात्मनातौ॥१२२

श्रीमन्त्री जी ने लक्ष्मण जी के सहित श्रीरामजी को प्रणाम करते देख करके शीघ्र उठाया। अपनें कण्ठ से लगाकर गोदी में बैठाये, आत्मा में महान् हर्ष भरे हुए दोनों कुमारों का खूब लाड़ प्यार किये ॥१२२॥

सुमन्तोवाच—हे राम हृदया कर्षो लाल मे धनिनोधनम् ॥
तथा त्वं लक्ष्मणश्रामी त्सुमित्रानन्द वर्द्धनः॥१२३
कौशल्यानन्दन श्रीमान् सर्वदा तेस्तु मङ्गलम् ॥
अप्रमेयगुणाराम राम राजीव लोचन ॥१२४॥

श्रीसुमन्त्र जी बोले हे लाल ! जिस प्रकार से धनिकों के मन को धन आकर्षित करता है उसी तरह सुमित्रीनन्द वर्धन इस लक्ष्मण जी के साथ आप मेरे मन को आकर्षित करते हैं। हे कौशल्यावर्धन आप सर्वदा के लिये श्रीमान् होवें, आपका मङ्गल हो, अनन्त अप्रमेय गुणों में आराम करने वाले हे राजिव लोचन राम ! आप सुखी होवें ॥१२४॥

साध्वी जनक पुत्रो ते करोतु सर्वदा प्रियम् ।
अमत्सरा भ्रातर स्ते निषेवंतु सुभक्तितः ॥१२५॥

सुन्दर साधू स्वभाव वाली श्रीजनकजी की पुत्री आपका सर्वदा प्रिय करें। आपके भ्राता लोग मात्सर्यता से रहित हाकर के सुन्दर भक्ति से आपकी सेवा करें ॥१२५॥

सर्वासु नृप विद्यासु निपुणो भव राघव ॥
वर्त्तन्तु ह्यनुकूलेन त्वयि शक्रा दयोसुराः ॥१२६॥

हे राघव ! आप समस्त राज विद्याओं में सुन्दर निपुण होवें। इन्द्रादिक समस्त देवता आपके अनुकूल बर्ताव करने वाले होवें ॥१२६॥

वर्द्धन्तु राष्ट्र कोशैस्त्वां सर्वदा सौ विनायकः ।
क्षयंयान्तु शत्रवस्ते स्वामीर्ष्यन्ति सतां प्रियम् ॥१२७॥

Scanned by CamScanner

और ये गणेश जी हमेशा के लिये आपकी और आपके खजाने की तथा आपके राज्य की सदा वृद्धि करें। आपके शत्रु आपमें ईर्ष्या करने वाले वे क्षय को प्राप्त हों आप सन्तों के प्रिय होंवें ॥१२७॥

निवसन्तु सतां येतु हृदये ते प्रियाः गुणाः ॥
मनोरथाश्च विघ्नं ते सिद्धयेन्तु महेश्वरः ॥१२८॥

इस प्रकार के आपके ये प्रिय गुण सन्तों के हृदय में निवास करें और आपके समस्त मनोरथों को महेश्वर निर्विघ्नता पूर्वक सिद्ध करें ॥१२८॥

विलशत्सौ कुमार्य्यं ते सौन्दर्य्यं चाति शोभनम् ॥
नाना कृड़ाहि सखिभि र्वर्द्धन्तु प्रति वासरम् ॥१२९॥

आपकी सुकुमारता आपमें सुन्दर बिलास करे, आपका शौन्दर्य अतिशय शोभन हो, विविध विविध प्रकारकी क्रीड़ाओं से नित्य प्रति आपमें सुन्दर बिलास करते हुए आपके सखी सखा वर्ग वृद्धिको प्राप्त हों ॥१२९॥

शिवोवाच—आशीर्वाग्भिः प्रयोज्येत्थं प्रेरितास्तेन तस्यते।
निपुणाः सेवका देवि स्नानादिषु विशेषतः ॥१३०॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि इस प्रकार श्रीराम जी को मन्त्री जी ने आशीर्वाद से नियोजित करके उसके बाद चतुर सेवकों को स्नानादिक विशेष सत्कृत्यों के लिये प्रेरित किया ॥१३०॥

अथ कंकोल कर्पूर काश्मीर चन्दनादिभिः ॥
सुगन्ध मिश्रितैश्चूर्णः सेवकैः राम लक्ष्मणौ ॥१३१॥

उसके बाद कंकोल कपूर केशर चन्दनादिक सुगन्धियों से मिश्रित चूर्ण बना करके सेवकों ने श्रीराम लक्ष्मण जी का उबटन किया ॥१३१॥

कृत्वातु कोमलाङ्गे तैः सरोज कोमलैः करैः ॥
उद्वर्त्तनं श्नापितौ च सरज्वा वारिणामुदा ॥१३२॥

अपने कमल सदृश कोमल करकमलों से सेवकों ने श्रीराम लक्ष्मण जी के कोमलाङ्गों में उबटन करके उसके बाद श्रीसरजू जी के जल से आनन्द मग्न होकर स्नान भी कराया ॥१३२॥

इत्यन्तरे तु मिष्ठान्नं पक्व दिव्य घृतेन यत् ॥
देवौजसोवरोधाच्च जनै र्नीतिं हित कृतम् ॥१३३॥

उसके बाद दिव्य घृत से सिद्ध हुए विविध प्रकार के मिष्ठानों को इसी बीच में महाराज देवौज जी के घर से सेवक लोग श्रीरामजी के लिए ले करके आये ॥१३३॥

तत्प्रीत्या रामचन्द्रेण प्रीत्यैक तोषितात्मना ॥
सखिभिर्भ्रातृभिश्चैव कृतं स्वादु सुभोजनम् ॥१३४॥

महाराज देवौज जी के स्नेह से केवल प्रीति से ही प्रसन्न मन होने वाले श्रीरामचन्द्र जी उन सब सखा भ्राताओं के सहित सुन्दर स्वादिष्ट भोजन किये ॥१३४॥

Scanned by CamScanner

अथ कृत्यं सुमन्तोपि कृत्वा यत्प्रात रान्हिकम् ॥
ययौ गुरु वशिष्ठस्य समीपं षड गुणान्वितः॥१३५॥

इधर सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैध, आश्रय—इन छः राजनैतिक गुणों से पूर्ण श्रीसुमन्त्र जी भी अपने नित्य प्रातःकालिक कृत्यों को करके श्रीगुरु वसिष्ठ जी के समीप गये ॥१३५॥

अयोध्या वासिनः सर्वे राजानो बहुम श्रये ॥
नृत्यादि कौतुके नाथ नभूव महती सभा ॥१३६॥

और बरात में श्री अयोध्या जी से आये हुए जितने भी राजा हैं सब सभा में आये, नृत्यादिक कौतुकों से पूर्ण बहुत बड़ी सभा हुई ॥१३६॥

कोटि कन्दर्प्प शोभाघ्नस्तत् सभायां रघूद्वहः ॥
राजते पूर्ण राकेशो यथा नक्षत्र मण्डले ॥१३७॥

उस सभा में करोड़ों कामदेवों की शोभा को अपने प्रत्येक अङ्ग में लज्जित करने वाले श्रीरघुनाथजी भी करोड़ों नक्षत्रों के बीच में पूर्णमासी के चन्द्रमा की तरह शोभित हैं ॥१३७॥

ये चागताः कौतुकिनोऽयोध्यायाश्चाप्यसंख्यकाः ॥
ते च सर्वे दर्शयन्ति विद्यां विस्मयदांनृणाम् ॥१३८॥

जो श्रीअयोध्या जी से आये हुए कौतुक करने वाले असंख्य गुणी लोग हैं वे भी अपनी २ विद्याओं के प्रभाव से जनता को विस्मय पैदा करनेवाले अपने गुणों को उस सभामें दिखा रहे हैं ॥१३८॥

इत्यन्तरे वरं रामं तत्पौरा दर्शितुं हिये ॥
सभ्या महान्ती धनिनो यानस्थाश्च समाययुः ॥१३९

इसी बीच नन्दिका नगरी के नागरिक सभ्य महान धनिक जन अपनी २ सवारियों में बैठकर श्रीरामजी को देखने के लिये आये ॥१३९॥

ते चादरेण मुनिना सुमन्तेन सभास्थले ॥
कृतप्रणामायथा योग्यं प्रतिहारै निर्वेशिताः ॥१४०॥

मुनि श्री वसिष्ठ जी महाराज और श्रीसुमन्त्र जी ने प्रणाम करते हुए देख उन सब लोगों को यथा योग्य आदर से उचित स्थानों पर प्रतिहारियों द्वारा बैठाया ॥१४०॥

ते सर्वे राम रूपस्य कौतुकानां च कौतुकम् ॥
कुतः कस्मात्कुत्र कोहमिति दृष्ट्वा सुविस्मृताः ॥१४१॥

वे सब नागरिक जन श्रीरामजी के रूप कौतुक को तथा उस सभा के कौतुक को देख करके हम कौन हैं ? कहां पर हैं ? किस लिए आये हुए हैं ? इस बात को भूल गये ॥१४१॥

इत्यन्तरे विप्र वृन्दै गुरू दैवौजसस्तुयः ॥
समागतो वशिष्ठाय सोधयित्वा सुलग्नकम् ॥१४२॥

इसी बीच में महाराज दैवौज जी के गुरू बहुत से ब्राह्मणों को साथ में लेकर के आए । श्री वसिष्ट जी ने सुन्दर लग्न पत्रिका को संशोधित करा के ॥१४२॥

Scanned by CamScanner

ज्ञापितुं विदुषां श्रेष्ठस्तस्मै वेदविदे स्वयम् ॥
परस्परं ह्यादरेण मिलित्वा तदभाषत ॥१४३॥

विद्वानों में श्रेष्ठ वेद के महान जानने वाले श्री वसिष्ठ जी से जान करके परस्पर आदर पूर्वक मिलन वात के किए ॥४३॥

श्रीरामं भूषितं चक्रे निपुणैः सेवकैस्तदा ॥
दिव्य वस्त्रैरलङ्कारै र्महामात्या नुशासितैः ॥१४४॥

उसके बाद चतुर सेवकों ने महामंत्री जी की आज्ञा से दिव्य वस्त्र भूषणों द्वारा श्री राम जी को भूषित किया ॥१४४॥

वर वाह्य हयश्चापि भूषयित्वा सुभूषणैः ॥
आज्ञयाहि सुमन्तस्य शीघ्रं नीतः सुसेवकैः । १४५॥

दुल्हा के चलने लायक घोड़े भी सुन्दर भूषणों से भूषित किए गए। सुन्दर सेवक लोग श्री सुमंत्र जी की आज्ञा से उन घोड़ों को लिवा लाए १४५॥

वर यान जनाः सर्वे भूषिता वस्त्र भूषणैः ॥
नाना यान समारूढाः स्वस्य स्वस्य समाजकैः ॥१४६॥

और सब बराती लोग भी सुन्दर वस्त्र भूषणोंसे भूषित हुए विविध प्रकारकी अपनीर सवारियों में बैठकरके ॥१४६॥

आगता दीप्ति मन्तस्ते श्रीरामस्य समीपकम् ॥
शतघ्नीनां महाशब्दै र्भेरी तुर्य्यादि नादितैः ॥१४७॥

अपनी शोभा से प्रकाश करते हुए श्री राम जी के समीप में आए जहाँ पर मशीनगन तोप छूट रहे। भेरी तूरी आदि महान् दुन्दुभी नाद हो रहे थे ॥१४७॥

वन्दीनामुच्चकैः शब्दैः कांस्य वीणादिभिः समं ॥
स्वर्ण दण्ड ग्राहितानां द्वाः स्थानां ध्वनिभिस्तथा॥१४८

इसी प्रकार वन्दियों का भी झाल वीणा मृदंग आदि बाजाओं के साथ ऊँचे शब्द से विरद गान हो रहा था। जिस सभा के द्वारों पर प्रतिहारी लोग हाथों में स्वर्ण रत्नों के दण्डों को लिए हुए उचित विधानों को कर रहे हैं ॥१४८॥

रथानां किङ्किणी नादैर्गज घण्टीच्चनादितैः ॥
चचाल रामचन्द्रस्य यानं श्वसुर मन्दिरे ॥१४९॥

रथों की किङ्कणी, हाथियों के घन्टे नृत्यादिक बाजाओं के महान नाद से तथा जन कोलाहल से सजी हुई श्रीरामचन्द्रजी की वरात जनवासे से श्वसुर के महल में जानेके लिये चल पड़ी ॥१४९॥

पूर्य्यां तु हर्म्य मारुह्य प्रति रथ्यां वराङ्गनाः ॥
रामं नीराजितुं हस्ते धृत्वा दीपालि संयुतम् ॥१५०॥

Scanned by CamScanner

नन्दिका नगरी की प्रत्येक गली में हर एक महल की उत्तम स्त्रियायें अपने २ मकान के छज्जा अट्टालिका द्वारों पर खड़ी हुई श्रीरामजी के दर्शन और आरतीके लिए हाथ में दीपादि मांगलिक वस्तुओं को लिए हुए खड़ी हुई हैं ॥१५०॥

कुमकुमाक्षत दूर्वादि हरिद्रा चूर्ण चित्रितम् ॥
स्थिताः काञ्चन पात्रं च कङ्कणादि विभूषिते ॥१५१॥

कोई उत्तम स्त्रियायें कुमकुम अक्षत दुर्वा हरिद्रा चूर्ण आदि वस्तुओं से चित्रित स्वर्ण पात्रों को अपने कणकणादि भूषणों से भूषित अपने करकमलों में लिए हुये खड़ी हैं ॥१५१॥

दृष्ट्वा दृष्ट्वा राम मुखेन्दु पूर्णं वराङ्गणा हर्म्य गवाक्ष कस्था ॥
नीराजयन्तो मुदिता मनोज्ञं किरन्ति लाजान्सुमनांसि मुक्ताः॥१५२

इस प्रकार छज्जादिकों पर खड़ी हुई पूर्ण चन्द्र के सदृश प्रकाशमान मुखचन्द्र वाली उत्तम स्त्रियायें श्रीरामचन्द्रजी के मुखचन्द्र को देख २ करके आनन्द मग्न हुई आरती करती है, लावा तथा फूलों को और रत्नों को न्यौछावर करके छिड़कती हैं ॥१५२॥

काश्चिद्वि कुर्व्वन्ति निरीक्ष्यरामं गीतानिगायन्ति तथा विधानि ॥
काश्चिन्निरीक्षंति निमेषहीना विस्मृत्य लज्जां विवृताननाश्च॥१५३॥

कोई श्रीरामजी को देख करके उसी ढंग के सुन्दर गीतों को गाती हैं और बलैया लेती हैं कोई श्रीरामजीके निमेष हीन होकर लज्जा को त्याग करके विकसित मुख हुई देखती हैं। अपने शरीर की सुध भूल रही हैं ॥१५३॥

कुमारिका कापि हठाच्च रामं निरीक्ष्य सर्वाङ्ग मनोज्ञ वेषम् ॥
अहं वरामीति विहस्य चैनं प्रियं प्रियां स्वात्म सखीं बभाषे ॥१५४

कोई कुमारियां सर्वाङ्ग मन रमणीय सुन्दर वेष में श्रीरामजी को देखकर हँस करके मैं उन श्री रामजी के साथ हठ करके बिवाह करूंगी। ये श्रीरामजी ही मेरे प्रियतम होंगे इस प्रकार अपनी आत्मा की प्रिय सखी से बोल रही है ॥१५४॥

पूर्णेन्दुना तुल्य मनोहरास्यं प्रफुल्ल कञ्जायत लोचनं च ॥
भाग्यं प्रशंसन्ति कुमारिकाणां नार्य्यो नरेन्द्रस्य निरीक्ष्यरामम्॥१५५

उन कुमारियों की बातों को सुनकर और चक्रवर्ति कुमार श्रीरामजी के पूर्ण चन्द्र सदृश मनो-हर मुखचन्द्र को तथा खिले हुये कमल के सदृश विशाल नेत्रोंको देखकर नगरकी नारीगण उन कुमारियों के भाग्य की प्रशंसा करती हैं ॥१५५॥

राजा प्रजानां जनकोध्रुवं स्यात्ते नास्य श्यालयोहि वयं भवामः॥
परस्परञ्चेति प्रियेक्षणंतं निरीक्ष्य रामं प्रमदा वदन्ति ॥१५६

राजा प्रजा जनों का निश्चित पिता होता है अतः ये श्रीरामजी की हम सब लोग साली तो होती ही हैं इस प्रकार विनोद भरी बातों को करती हुई अत्यन्त प्रिय श्रीरामजी से कटाक्षों को मिलाती हुई प्रमदा गण आपस में बातें करती हैं ॥१५६॥

Scanned by CamScanner

प्रगल्भता हास्य रसेण चैनं परिक्रमन्ते सुरहस्य गेहे ॥
यद्दत्तया तत्र विलाशयामः किं दूषणं लोक समस्त रीत्या॥१५७

इस प्रकार प्रगल्भता पूर्वक हास्य रस से बात करती हुई इन श्रीरामजी को देखने के लिये हम सुन्दर रहस्यों के महलों में इन श्रीरामजी को ले जाकर के घेर करके अपनी इच्छा भर करके इनके साथ विलास करेंगी। सम्पूर्ण लोकों की रीति से क्या यह दोष है? अपितु नहीं ॥१५७॥

दृष्ट्वा वृष स्कन्ध विशाल वक्षः प्रलम्ब बाहुं तनु मध्यदेशम् ॥
विशाल नेत्रं रविवंश भूषं ययुः कुमार्य्यो तदुद्दिश्य चिन्ताम्॥१५८

इस प्रकार कहती हुई उन सब नगर की कुमारियों को हृष्ट पुष्ट कन्धा वाले विशाल वक्षस्थल वाले, लम्बी भुजा वाले, पतली कमर वाले, विशाल नेत्र वाले सूर्यकुल के भूषण स्वरूप इन श्रीरामजी की प्राप्ति के लिए मनमें अतिशय चिन्ता होगई ॥१५८॥

इत्थं तु रामो वरभूषण श्रीरनन्त कन्दर्प्पं विमोहन श्रीः ॥
उत्साह दीपावलि सत्प्रकारं ध्वजैश्च हेम्नः कलशैः प्रभासम्॥१५९

इस प्रकार अनन्त कन्दर्प के मोहन करने वाले दुलहा वेष श्रीरामजी नगर में लोगों के हृदय में उत्सव आनन्द को पैदा करते हुए महान् दीपावली और उत्साहके सुन्दर प्रकाश से तथा स्वर्ण के कलश ध्वजादिकों से सजे ऊँचे २ महलों से शोभित श्वसुर के दरवाजे पर आ पहुँचे ॥१५९॥

असंख्य यानैः श्वसुरस्य गेहं रथ्या सुदक्षेपि च वाम भागे ॥
वराङ्गणानां हृदयेभिलाषं प्रवर्द्धयन्नात्मनि चाप शीघ्रम् ॥१६०॥

श्वसुर के दरबार में दरवाजे पर घर में तथा गलियों में, दाहिने बायें भाग वाले महलों में असंख्य जनों की भीड़ लगी है उत्तम स्त्रियों के हृदय की अभिलाषाको अपनेमें शीघ्र बढ़ाते हुए श्रीरामजी के स्वागत सत्कार करने के लिए ॥१६०॥

पीतादि चूर्णैः कनकस्य पात्रे नीराज संचित्रितके सुधृत्वा ॥
कक्षा सुगङ्गो भवनस्थदीप्ते द्वारे लद्भूषण भूषिताभिः ॥१६१॥

स्वर्ण पात्रों में हर्दी आदिक चूर्णों से चित्र विचित्र चित्रकारी करके मांगलिक सौजों को सजी हुई प्रकाशमान राजमहल के दरवाजे पर सद्भूषणों से भूषित उत्तम स्त्रियायें खड़ी मङ्गल कृत्य कर रही हैं ॥१६१॥

स्थिताभिराकांक्ष वरागमंसः सुवासिनीभि र्मधुरे क्षणाभिः ॥
नीराजमानो मधुरे क्षणोपि तदाङ्गने मण्डपके विवेश ॥१६२॥

इस प्रकार वर के आगमन की अकाक्षां वाली सुवासिनी स्त्रियों के मधुर कटाक्षों द्वारा नीराजित होते हुये मधुर कटाक्ष वाले श्रीराम जी उस राजमहल के दरवाजे से पूजित होकर मध्य आंगन के बीच मण्डप में प्रवेश किये ॥१६२॥

पत्न्या पटेनात्म पटस्यपर्वाँ दत्वा करे काञ्चन वारि पात्रं ॥
धृत्वा सुरौजाः रघुनन्दनस्य सुकाञ्चेपीठ तलेम्बुजाभौ ॥१६३॥

Scanned by CamScanner

इसके बाद महाराज श्री देवौज जी अपनी पत्नी के वस्त्र से अपने वस्त्र की ग्रन्थि देकर हाथमें स्वर्ण पात्र में जल लेकर स्वर्ण सिंहासन में बैठे हुए श्रीरामजी के कमलवत सुन्दर चरणों को धोने के लिये उपस्थित हुये ।।१६३।।

बध्वाञ्जलिं पश्यति दीनदृष्ट्या पादाब्जु पाश्यो परमेश्वरैश्च ॥
प्रक्षालनाय प्रतिकृत्य देयं तदा वशिष्ठे न कृताभ्य नुज्ञा।।१६४।।

परम ईश्वरों से उपास्य श्रीरामजी के चरणों को हाथ जोड़ करके दीन दृष्टि से ताक करके महाराज देवौज जी धोने के लिए चाह रहे थे कि उसी समय श्री बसिष्ठ जी ने आज्ञा दी ।।१६४।।

गुरोर्वर स्यापि ततो नृपेण पादौ वशिष्टस्य विशेषभावात् ॥
प्रक्षालितौ देय मथोपकृत्वा ततः सुमन्तस्य पितुः क्रमेण ।।१६५।।
प्रस्थापितौ काञ्चनके सुपीठे सुकोमलेनास्तरणेन शोभे ॥
ततोन्य राज्ञां च प्रजा जनानां प्रजोजिता बन्धु जना प्रवीणाः।।१६६

तब प्रथम श्रीगुरु वसिष्ठ जी महाराज के चरण विशेष भाव से धोये। उसके बाद दुल्हा के भी चरण धोये उसके बाद महाराज चक्रवर्ति श्रीदशरथ जी के समान मानकर सुमन्त्र जी के चरण धोये। इसी क्रम से और भी उचित कृत्यों को करते हुये सबको स्वर्ण सिंहासनों पर कोमल बिछावन बिछे हुये शोभित आसनों पर बैठाये तत्पश्चात् साथ में आये हुये सभी राजाओं को और प्रजाजनों को भी बड़े चतुर देवौज जी के भाइयों ने सबको बैठाया स्वागत किया ।।१६५-१६६।।

न जातुकेषां हृदये समंजसाद्वीनं समाजे महतां महत्यपि ।
इत्यात्म तुल्या निपुणाः सुबान्धवाः सत्कार कार्य्ये परितोनियोजिताः ।१६७।।

यद्यपि समाज बहुत बड़ा है तो भी उस मण्डप में किसी को किसी प्रकार का असमंजस न हो करके सबकी विस्तार स्थानों पर बैठाये क्योंकि महाराज देवौज जी के भ्रातादिक सभी बन्धु वर्गो ने महाराज देवौज जो के ही सदृश स्नेह पूर्वक स्वागत सत्कार करके यथा स्थानोंमें बैठाकर प्रसन्न किया ।।१६७।।

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुमा महेश्वर सम्वादे मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्चः पञ्चाशत्तमः सर्गः ।।५६।।

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां मार्ग क्रम वर्णनो नाम पञ्च पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तम् ।।५६

शिवोवाच—लक्तारुणांघ्रि तल हस्त तलांज्जनाक्षो—
राजच्छिखण्डक चर्यांचित गण्ड युग्मः ।।
ताम्बूल-चर्वित रदाधर रक्त शोभी—
नाशाग्र मौक्तिक दर स्मित मोहनाङ्गः ।।१।।

श्रीशङ्कर जी बोले—लाक्षारंग [महावर] से रंगे हुए चरण तल तथा हस्ततल और अञ्जन से आंजे नेत्र, मोर पंखों से सजे मौर, अलकों से सुशोभित दोनों कपोल, ताम्बूल के चर्वण से रँगे हुए दांत

तथा अधर ओष्ठ अरुणिमा नासा के अग्र भाग में धारण किये हुए नासामणि, शंख के सदृश कण्ठ, मन्द मुसुकाते हुये मुख चन्द्र वाले, अतिशय मोहन अंग वाले श्रीरामजी शोभित हो रहे हैं ॥१॥

राजत्किरीट मणि कुण्डल कंकणाढ्यो केयूर रत्न खचितांगुलि मुद्रिको सौ ॥
सौवर्ण पाद कटको परि सृङ्खलेन निष्कादि भूषिततया सुदृशां मनोहा ॥२।

क्रीट, कुण्डल, कण्कण, केयूर, मुद्रिका, पैर का कण्कण, मेखला, बिसकीमतीय रत्नों से खचे बहुत से भूषणों से भूषिताङ्ग, विशाल सुन्दर नेत्र, मनको हरण करने वाले ॥२॥

कौसुंभ्य कञ्चुक परिस्कृत रुक्म चित्रं पादस्य कञ्चुक हरिद्वसनंदधानः ॥
पाद क्रमै विंजित नाग मृगाधि राजो रामो विवेश मणिमण्डप मद्रिकन्ये॥३।

हे पर्वत कन्यके! कुसुमी रग के कंचुक पहने हुए, असली सोने की जरीदार पाद कंचुक और हरित रंग के बस्त्रों को धारण किये हुए श्रीरामजी अपने पैरों की गति से हाथी और सिंह की गति को बिजय करते हुये मणिमय मण्डप में प्रवेश किये ॥३॥

शिखे व दीपस्य तु रामरूपं तस्मिन्पतङ्गाः सुदृशां मनांसि ।।
धावन्ति उत्काः परितोनिपेतु विस्मृत्य पातिव्रत मात्मरूपम् ॥४॥

इस प्रकार के श्रीरामजी का रूप दीप शिखा के समान है और सुन्दर नेत्रों वाली स्त्रियों का मन फतिंगा होगया। इस प्रकार का मोहित हुई स्त्रियायें अपने पातिव्रत धर्मको तथा अपने लोक मर्यादित स्वरूप को भूलकर दशो दिशाओं से दौड़ करके आकर श्रीरामरूप में आसक्त होगयी ॥४॥

सुवासिनीभिश्च सुवासितांग्यो नीताः कुमार्य्यो मणि मण्डपं ताः॥
मन्दत्व मीयुः परितः प्रदीपाः यासां प्रभाताः किमु वर्णनीयाः॥५॥

इस प्रकार सुन्दर सुगन्धित अङ्ग वाली सुवासिनी स्त्रियायें तथा कुमारिकायें चारों तरफ से घेरे हुए श्रीरामजी को मणि मण्डपके अन्दर लायीं वे सब स्त्रियाओंके अङ्ग प्रकाशसे चारों तरफ के दीपों का प्रकाश मन्द पड़ गया। हे पार्वती! अब मैं उन स्त्रियाओं की सुन्दरता का क्या वर्णन करूं ॥५॥

विधान होमस्य च धूमव्याजा न्निपीड यन्त्यम्बुज चारु नेत्रम् ॥
अपाङ्ग दृष्ट्यात्मपतेः कुमार्य्यो पश्यन्ति रूपं रघुनन्दनस्य ॥६॥

श्रीरामजी के स्नेह से आसक्त हुई स्त्रियायें हवन के धुआं के बहाने से आंखों को बन्द की हुई किञ्चित आखों को खोल करके अपने कटाक्षों से वे कुमारिकायें अपने आत्मपति श्रीरघुनन्दन जी को देखने लगी ॥६॥

गृहार्च्चनं देव समर्च्चनं च कृत्वा यथा वेद विधान मुक्तम् ॥
हस्तग्रहो भूद्रघुनन्दनेन देवौजसोऽनेक सुकन्यकानाम् ॥७॥

गृह पूजन, देवताओं का पूजन, वेदोक्त विधानों से सब कृत्यों को करके महाराज देवौज जी की सुन्दर समस्त कन्याओं का श्रीरघुनन्द जी ने पाणिग्रहण किया ॥७॥

वेदध्वनौ चारु वराङ्गणानां गानध्वनौ वाद्य महा प्रघोषे ॥
जातेष्यैकन्या न्नृपति महात्मा स्तुतिं चकारांजलिनाति नम्रः॥८॥

Scanned by CamScanner

ब्राह्मणों ने वेद ध्वनि समस्त सुवासिनियों के गान की ध्वनि तथा अन्य समस्त बाजाओं के महाघोष पूर्वक कन्याओं के पाणिग्रहण हो जाने पर महात्मा देवौज जी ने हाथ जोड़ करके बड़ी नम्रता पूर्वक स्तुति करके नमस्कार किया ॥८॥

राजोवाच-दूरा दात्मकृते विहाय परितो लज्जामया राघव।
नीतस्त्वं जगतीपते प्रिय सुतः स्वार्थस्तु तत्केवलम् ॥
मन्येहं श्रमकारणं तव परं सौख्यायते सर्वथ ॥
यन्मेशील गुणेन वात्म महता धाष्ट्यं परं क्षम्यताम् ।९

महाराज देवौज जी बोले कि हे राघव ! मैंने अपने स्वार्थ के लिये लज्जा को त्याग करके बहुत दूर से आपको बुलाया। सम्पूर्ण जगत के एक पति महाराज दशरथ जी के अत्यन्त प्रिय पुत्र आपको बुलाकर मैंने केवल अपना स्वार्थ ही सिद्ध किया। यद्यपि मैंने आपके ही सुखके लिए आपको इतना बड़ा परिश्रम दिलाया। तो मैंने अपने शील गुण को मिटा करके आपकी आत्म महत्ता पर धृष्टता करके सर्वथा अनुचित किया परन्तु आप मेरे को क्षमा करदें ॥९॥

श्रीरामोवाच-गुरुरसि गुणवान्धीरोमायासिकिमपि हीनत्वम् ॥
तुष्टोहं सकल विधिना दत्तात्मजे लोक विख्याते ॥१०॥

श्रीराम जी बोले कि आप बड़े गुणवान धीर मेरे पूज्य गुरू लगते हैं इस प्रकार की हीनत्व कार्पण्यता को क्यों प्राप्त हो रहे हैं आपने तो समस्त लोक में प्रसिद्ध। अपनी आत्म कन्याओं को सुन्दर सर्वशास्त्र विधि से मुझे दिया है मैं अतिशय प्रसन्न हूँ ॥१०॥

येन चैवात्मना तुल्या दत्ता सत्कृत्य ह्यात्मजा ॥
दत्तं न दत्त मन्यत्किं तेन सर्व प्रदायिना ॥११॥

जिसने अपनी आत्मा के सदृश सुन्दर कन्याओं को बड़े सत्कार पूर्वक मेरे लिये दे दिया उस अपने सर्वस्व दान देने वाले ने अब क्या बाकी रक्खा ॥११॥

सुमन्तं च वशिष्टं च स्तुत्वा देवौजसा तदा ॥
रात्रीं बहुगतां वीक्ष्य भोजनाय समादृतौ ॥१२॥

उसके बाद महाराज देवौज जी ने श्रीसुमन्त्र जी और श्रीवशिष्ठजी की भी स्तुति की फिर रात्रि बहुत बीत गई ऐसा देख करके सबको भोजन के लिये सुन्दर आदर पूर्वक बुलाया ॥१२॥

सुगन्ध सिंचितागारे विशाले मणि चित्रिते ॥
दीपायनै र्विचित्रैश्च भूषिते परमाद्भुते ॥१३॥

सुगन्धि से सिंचित मणिमय विशाल चित्र बिचित्र महल में जहां दीपावलियों की भी परम अद्भुत विचित्र सजावट है इस प्रकार के सुन्दर विभूषित महल में ॥१३॥

आसने नर्म वसनैर्वेष्ठिते सम पंक्तिभिः ॥
वशिष्ठादि सुमन्ताद्याः स्थापिता विनयात्पुनः ॥१४॥

सुन्दर पंक्ति पूर्वक कोमल वस्त्रों से बने हुये आसनों पर श्रीवसिष्ठ जी श्रीसुमन्त्र जी आदिक समस्त लोगों को विनय पूर्वक बैठा करके ॥१४॥

Scanned by CamScanner

पंक्तिश्चातुर वर्ण्यानां सादरा द्विनयेन वै ॥
विभागेन परिस्कृत्वा दत्वासन मनुत्तमम् ॥१५॥

चारों वर्णों के समस्त लोगों को भी विनय प्रार्थना करके अलग २ सुन्दर विभाग पूर्वक उत्तम आसनों पर सबको बैठाया ॥१५॥

आज्ञप्ता सूपकाराश्च यथा योग्येषु पंक्तिषु ॥
कोट्यवधि निपुणैस्तैः क्षणे नैवाथ भोजनैः ॥१६॥

उसके बाद यथा योग्य पंक्तियों में उचित रसोइया लोगों को करोड़ों की संख्या में नियुक्त करके एक क्षण में बड़ी चतुरता पूर्वक समस्त पदार्थ भोजन के लिए परसे गये ॥१६॥

व्यजनैश्च रसाधिक्यैः पात्रे काञ्चन रौप्यकैः ॥
पूरिता पंक्तयः सर्वाविधिव द्वचनादृतैः ॥१७॥

पंक्तियों में विविध प्रकारके अतिशय रसीले समस्त व्यंजन स्वर्ण रत्नोंके और चांदी के पात्रों में परसे हुए सुन्दर विधान पूर्वक आदर के वचनों से सब पंक्तियां को पूर्ण किया ॥१७॥

भ्रातृभि स्तु स्वयं राजा काञ्चन व्यजनं करे ॥
धृत्वा समीप मास्थाय कारयामास भोजनम् ॥१८॥

इस प्रकार के ये समस्त कार्यों को तो महाराज देवौज जी के भ्राताओं ने ही कर लिया। स्वयं तो महाराज स्वर्ण जटित व्यंजन को हाथ में लेकर के श्रीराम जी वसिष्ठ जी आदिक के समीप में बैठकर भोजन कराने लगे ॥१८॥

बान्धवा ये ह्यात्म तुल्या निपुणा मधुभाषिणः ॥
योजितास्तेऽपि सर्वेषु सत्कृतौ हि महिक्षिताम् ॥१९॥

महाराजके आत्मा के सदृश स्नेही चतुर भाई लोग मधुर वाणियों से बड़ी चतुरतापूर्वक अन्य समस्त राजाओं के सत्कार के लिये नियोजित किये गये ॥१९॥

सुखेन मधुरं गानं समयोचित शोभनम् ॥
नारीणां सुस्वरै रम्यैः श्रुत्वा श्रुत्वा विलम्बितः॥२०

नारियों के समयानुसार उचित शोभा देने वाले अतिशय सुखदाई मधुर गीत रमणीय सुन्दर स्वर से गाये गये सुनकर भोजन में बड़ी देर लगी ॥२०॥

उत्तमा मध्यमा नीचा स्तोषं प्राप्य सुभोजनैः ॥
प्रसंशं तश्चोत्थितास्ते राजानं हि सुरौजसम् ॥२१॥

इस प्रकार उत्तम मध्यम नीचादि भेदों से समस्त बरातियों को भोजन कराकर सन्तुष्ट किया। सभी बराती लोग महाराज देवौज जी की प्रशंसा करते हुये सन्तुष्ट होकर के उठे ॥२१॥

सुप्रीत्या सखि भिश्चैव रामं लक्ष्मण संयुतम् ॥
सुवासिन्योहि मधुरे गाने हास्य विलासतः ॥२२॥

Scanned by CamScanner